Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

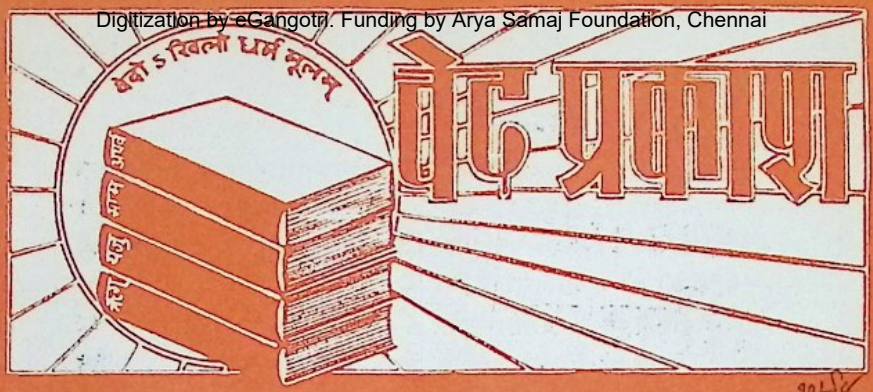

ओ३म्

मधुर भाषण

मधुमतीं वाचमुदेयम् । अथर्व० १६।२।२

(मधुमतीम्) मीठी (वाचम्) वाणी (उदेयम्) बोलूं ।

मधुर वचन से सभी को सुख मिलता है, सभी प्रसन्न और सन्तुष्ट होते हैं। मीठा बोलना वशीकरण मन्त्र है, अतः मधुरभाषी बनो । मधुरभाषण कामधेनु के समान है । यह कामनाओं को पूरा करता है, यश और कीर्ति को बढ़ाता है। मधुर भाषण से मनुष्य को जितना आनन्द और सुख प्राप्त होता है, उतना आनन्द न तो शीतल जल प्रदान कर सकता है, न शीतल छाया और न ही पवन, इसलिए सर्वदा मीठी वाणी बोलनी चाहिए । एक कवि के शब्दों में—

ऐसी वाणी बोलिए, मन का आपा खोय ।
औरन को शीतल करे, आपहुं शीतल होय ॥

प्रभु नहीं चाहता कि हम कठोर वाणी बोलें । एक कवि ने कितना सुन्दर कहा है— प्रभु चाहता नहीं सख्ती बयान में ।
इसलिए हड्डी बनाई नहीं जबान में ॥

शस्त्र से कटा हुआ घाव फिर भर जाता है, परन्तु कटुवाणी रूपी शस्त्र का घाव नहीं भरता । कोई व्यक्ति कठोर बोले, तो भी हमें मीठा ही बोलना चाहिए, क्योंकि— क्षारं जलं वारिमुचः पिबन्ति तदेव कृत्वा मधुरं वमन्ति ।
सन्तस्तथा दुर्जनदुर्वचांसि निपीय सूक्तानि समुद्गिरन्ति ॥

मेघ (बादल) खारा जल पीते हैं, फिर उसी को मीठा बनाकर उगलते हैं, इसी प्रकार सज्जन दुष्टों के कठोर वचनों को पीकर फिर मीठा बनाकर बोलते हैं ।

सदा सत्य, प्रिय, हितकर और मीठा बोलें ।

—स्वामी जगदीश्वरानन्द जी द्वारा लिखित 'स्वर्ण पथ' से

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बोध-कथा

संवेदनशील नेहरू जी

स्वाधीन भारत के पहले प्रधानमन्त्री पं० जवाहरलाल नेहरू न केवल जनता के लोकप्रिय प्रधानमन्त्री थे, प्रत्युत वह वास्तव में जन-जन की पीड़ा अनुभव करते थे, साथ ही वह बच्चे-बच्चे में आत्म-सम्मान की गरिमा भरना चाहते थे। ऐसे ही संवेदनशील नेहरू जी की ये झांकियां लीजिए—

❀ एक बार नेहरू जी दक्षिण भारत के प्रमुख नगर मद्रास गए। जब वह अपनी मोटर में बैठे जा रहे थे तब उन्होंने सड़क के किनारे बहुत ही दीन-हीन गरीब आदमी को देखा। उसका शरीर बहुत ही दुबला-पतला था, चेहरा हल्दी-सा पीला मुरझाया हुआ था, लगता था कि उसे खड़े होने में भी तकलीफ हो रही थी, इसके बावजूद वह खड़े-खड़े गुब्बारे बेच रहा था। नजर पड़ते ही नेहरू जी ने अपनी मोटर रुकवाई और मोटर से उतर कर उस आदमी से पूछा—भाई, क्या बहुत थक गए हो। उस थके-हारे गरीब आदमी ने कहा—"बाबू जी, क्या किया जाए, पेट के लिए तो मेहनत-मजूरी करनी ही पड़ती है।" नेहरू जी ने कहा—"तुम्हारे ये सब गुब्बारे कितने रुपये के हैं?" उस आदमी ने कहा—"लगभग पांच रुपये के होंगे।" नेहरू जी ने अपने सचिव से पांच रुपये दिलवा दिये और सारे गुब्बारे मोटर में रखवा लिए। मोटर में बैठकर रास्ते में जो भी बच्चा दीखता मोटर रुकवा कर उसे गुब्बारा दे मुस्कराते आगे बढ़ जाते।

❀ एक बार प्रधानमन्त्री नेहरू जी पंजाब के दौरे से लौटे। पालम हवाई अड्डे पर पहुंचकर भी हवाई जहाज अड्डे पर काफी देर तक मंडराता रहा। नेहरू जी अपने स्थान से उठे और विमान चालक से पूछा—"हवाई जहाज उतारते क्यों नहीं हो?" उसने जवाब दिया, खबर मिली है कि अभी तक आपकी मोटर हवाई अड्डे पर नहीं आई है। नेहरू जी ने कुछ गरम होकर कहा—विमान तुरन्त उतारो मुझे मोटर की जरूरत नहीं है। चालक ने पहले झिझक दिखलाई पर नेहरू जी के हुक्म के आगे झुक गया। नेहरू जी पदल ही चल दिए, विवश हो उनके अधिकारी भी पीछे-पीछे चले, रास्ते में अधिकारियों ने उनसे मोटर में बैठने का अनुरोध किया पर नेहरू जी ने कहा—क्या आप समझते हैं, मुझे पैदल चलना नहीं आता, सारे अफसर स्तब्ध रह गए।

❀ एक बार नेहरू जी बच्चों की एक कला-प्रदर्शनी में गए, उन्होंने वहां खड़े बच्चों से उनके नाम पूछे। एक नन्हे से बच्चे को उन्होंने गोद में लेकर उसका नाम पूछा किन्तु बालक गूंगा बना रहा, कई बार पूछने पर भी जब उसने कोई जवाब नहीं दिया तो पण्डित जी ने उसे मिठाई का लालच दिया तो बच्चे ने बड़े संकोच से अपना नाम 'मोतीलाल' कहा। यह नाम सुनते ही नेहरू जी तुरन्त बोल उठे—'बाप रे!'

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ओ३म्

वेदप्रकाश

संस्थापक : स्वर्गीय श्री गोविन्दराम हासानन्द

वर्ष ४४, अंक ४] वार्षिक मूल्य : बीस रुपये [नवम्बर १९९४

सम्पा० अजयकुमार आ० सम्पादक : स्वा० जगदीश्वरानन्द सरस्वती

मूर्त्तिपूजा की तार्किक समीक्षा

—डॉ० भवानीलालजी भारतीय

[महर्षि दयानन्द सरस्वती के काशी-शास्त्रार्थ को इस वर्ष सन् १९९४ में १२५ वर्ष पूर्ण हो रहे हैं। इस अवसर पर हम डॉ० भवानीलालजी भारतीय का एक महत्त्वपूर्ण लेख दे रहे हैं। आशा है, पाठक इसे रुचिपूर्वक पढ़ेंगे। स्वयं मूर्त्तिपूजा के पाखण्ड से बचेंगे और दूसरों को इस गढ़े में गिरने से बचाएँगे।]

—जगदीश्वरानन्द सरस्वती

श्री पाण्डुरंग शास्त्री आठवले प्रतिपादित 'शास्त्रीय मूर्त्तिपूजा' की तार्किक समीक्षा

मूर्त्तिपूजा का विधान वैदिक अथवा उसके पश्चाद्वर्ती आर्ष साहित्य में कहीं भी उपलब्ध नहीं होता। यदि यह कहा जाए तो अत्युक्ति नहीं होगी कि पुरातन वैदिक उपासना-पद्धति में मूर्त्तिपूजा का कोई प्रावधान नहीं था। वैदिक संहिताएँ, उनके बाद निर्मित ब्राह्मणग्रन्थ, आध्यात्मविद्या के प्रतिपादक उपनिषद्, सांख्यादि षट्दर्शन यहाँ तक कि रामायण एवं महाभारत जैसे इतिहास ग्रन्थों के मूल अंशों में भी मूर्त्ति-पूजा के लिए कहीं कोई स्वीकृति या विधान दिखाई नहीं पड़ता। इसके स्पष्ट कारण भी थे। वैदिक ईश्वरवाद में परमात्मा की सत्ता को निराकार, निर्विकार, निर्लेप तथा शरीरादि भौतिक उपादानों से सर्वथा पृथक् सच्चिदानन्दादि लक्षणों से युक्त चिन्मय तत्त्व के रूप में ही मान्यता मिली थी। इसलिए उसकी कोई प्रतिमा या प्रतिकृति, मूर्त्ति या प्रतीक की कल्पना नितान्त अशक्य तथा कल्पनातीत समझी गई थी।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मूर्त्तिपूजा की उत्पत्ति

वैदिक धर्म में जब याज्ञिक हिंसा, कर्मकाण्ड बाहुल्य जातिगत ऊँचनीच के भाव तथा वर्णविधान को कर्मानुसार मानने की अपेक्षा जन्म के आधार पर मानने-जैसी विकृतियों का प्रदुर्भाव हुआ तो उसकी प्रतिक्रियारूप में जन्मे आर्हत (जैन) और बौद्ध मत में ईश्वर के स्थान पर कैवल्य अवस्था को प्राप्त तीर्थंकरों तथा शाक्य-मुनि गौतमबुद्ध की पूजा प्रचलित हुई। इन तीर्थंकरों तथा गौतमबुद्ध के परिनिर्वाण के पश्चात् उनके अनुयायियों ने उनकी धातु, प्रस्तरादि से निर्मित मूर्त्तियाँ बनाईं तथा विधिपूर्वक उनकी पूजा-अर्चना करने लगे। यहीं से भारत में मूर्त्तिपूजा की नींव पड़ी। आज से दो-अढ़ाई हज़ार वर्ष पहले बनाये किसी हिन्दू-मन्दिर या मूर्त्ति का न पाया जाना ही इस बात का प्रमाण है कि मूर्त्तिपूजा जैन-बौद्धादि अवैदिक मतों के बाद ही प्रचलित हुई थी। वैदिक ब्राह्मणों ने इन्हीं नास्तिक मतों के अनुकरण पर दशावतार या चौबीस अवतारों की कल्पना की और षोडशोपचार-विधि से उनकी पूजा प्रारम्भ की। इसी से ब्राह्मणधर्म में मूर्त्तिपूजा का आरम्भ हुआ। जैन तीर्थंकरों तथा शाक्यमुनि की प्रतिमाएँ वैराग्यभाव प्रधान निवृत्तिमार्गी साधुओं-जैसी थीं। जबकि ब्राह्मणों द्वारा कल्पित राम, कृष्ण आदि वैष्णव अवतारों की मूर्त्तियाँ राजसी वस्त्राभूषणों से सज्जित और उनकी सीता, रुक्मिणी अथवा राधा आदि पत्नियों के साथ स्थापित की गईं। कालक्रम में मूर्त्तिपूजा में आडम्बरों का अधिकाधिक समावेश हुआ और वल्लभादि वैष्णव मतों के मन्दिरों में भोग-राग आदि का स्थूल आडम्बर पराकाष्ठा तक पहुँच गया। इस मन्दिर-विधान तथा उससे जुड़ी मूर्त्तिपूजा में देशवासियों का असंख्य द्रव्य खर्च होने लगा, फलतः सामान्य उपासकगणों की प्रभूत सम्पत्ति खिंच-खिंचकर मन्दिरों में एकत्र होने लगी। मन्दिरों के पुजारी तथा महन्तगण कोट्यधीश हो गये जबकि उपासक-समुदाय निरन्तर दरिद्र होता चला गया। आज भी तिरुपति तथा नाथद्वारा-जैसे मन्दिरों में पाया जानेवाला प्रचुर वैभव तथा सम्पत्ति इस तथ्य के परिचायक हैं।

शास्त्रों से मूर्त्तिपूजा सिद्ध नहीं होती

मूर्त्तिपूजा को शास्त्रोक्त मान्यता देने का प्रथम प्रयास वैदिकेतर ग्रन्थों में किया गया। तदनुसार महाभारत तथा रामायण-जैसे आर्य इतिहासों में इन महाकाव्यों के नायकों तथा अन्य पुरुषों द्वारा मूर्त्तिपूजा किये जाने के अनेक कल्पित विधानों को प्रविष्ट कराया गया तो दूसरी ओर अठारह पुराणों की रचना के द्वारा शिव, विष्णु, गणपति, शक्ति और सूर्य-जैसे परवर्ती पौराणिक देवों की परिकल्पना को सुदृढ़ किया गया और इन्हीं देवी-देवताओं के मन्दिरों का निर्माण, उनकी मूर्त्तियों की स्थापना तथा प्रतिमापूजन से होनेवाले लाभों का चमत्कारपूर्ण वर्णन भी अतिश्योक्तियुक्त शैली

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

में किया गया तथापि इस पौराणिक साहित्य के रचयिताओं ने कहीं भी निराकार उपासना का न तो खण्डन किया और न ही मूर्त्तिपूजा की अनिवार्यता या अपरिहार्यता ही बताई। इसके विपरीत वे यही कहते रहे कि अल्प बुद्धिवालों को परासत्ता की ओर ले-जाने के लिए प्रतिमा एक साधनमात्र है। **''प्रतिमा स्वल्पबुद्धीनाम्''** (चाणक्यनीति ४।१९)। उधर मूर्त्तिपूजा के खण्डन में भी आवाजें उठने लगीं। भागवत जैसे प्रतिष्ठित वैष्णवपुराण ने मूर्त्तिपूजकों को जड़बुद्धि कहा तो शंकराचार्य ने परापूजा लिखकर मूर्त्तियों में देवता का आवाहन करने, उसे आसन प्रदान करने, तदनन्तर पत्र, पुष्प, दीप, गन्ध, वस्त्र, नीराजन तथा नैवेद्य आदि स्थूल उपकरणों के द्वारा उसकी पूजा करने का उपहास करते हुए स्पष्ट घोषणा की—

पूर्णस्यावाहनं कुत्र सर्वाधारस्य चासनम्।
स्वच्छस्य पाद्यमर्घ्यं च शुद्धस्याचमनं कुतः॥

सन्तों द्वारा मूर्त्तिपूजा का खण्डन

शंकर के बाद के युग में उत्तर तथा दक्षिण भारत में सन्तमत की एक जबरदस्त लहर पैदा हुई। नानक, दादू, कबीर, रैदास, चरणदास, पलटू, सुन्दरदास, रज्जब आदि निर्गुणी सन्तों ने हृदय-मन्दिर के भीतर ही अन्तर्यामी के रूप में विद्यमान परमात्मा को अनुभव करने पर ज़ोर दिया और मूर्त्तिपूजा को सर्वथा अस्वीकार कर दिया। इसी प्रकार तुकाराम, नामदेव आदि महाराष्ट्र-निवासी सन्तों ने भी स्थूल मूर्त्तियों की अपेक्षा सत्, चित् आनन्दस्वरूप परमात्मा की मानसिक पूजा को ही प्रशस्त माना। इन सन्तों में कबीर-जैसे फक्कड़ तथा अलमस्त व्यक्तित्व के धनी लोगों ने यदि मूर्त्तिपूजा की कठोर, तिक्त तथा व्यंगात्मक शैली में आलोचना की तो अन्य मृदुल स्वभाववाले नानक तथा दादू आदि ने कोमलवाणी में इस विधान की अनुपयुक्तता बताई।

सुधारकों द्वारा मूर्त्तिपूजा का खण्डन

उन्नीसवीं शताब्दी में जब राजा राममोहन राय तथा स्वामी दयानन्द-जैसे धार्मिक नवजागरण के ज्योतिर्धन महापुरुषों ने मूर्त्तिपूजा को अवैदिक, आर्य-उपासनाविधि के प्रतिकूल तथा आडम्बर, पाखण्ड, भ्रष्टाचार एवं दुराचार की पोषक तथा वर्द्धक बताया तो मूर्त्तिपूजा के समर्थन में भी इस युग के कतिपय धर्माचार्यों का स्वर फूट पड़ा। सर्वप्रथम रामकृष्ण परमहंस ने स्वकल्पित दृष्टान्तों, नाना रूपकों और अलंकारों द्वारा मूर्त्तिपूजा का समर्थन किया, किन्तु उनके द्वारा मूर्त्तिपूजा के समर्थन में प्रस्तुत किये गये अधिकांश हेतु हेतु न होकर मात्र हेत्वाभास ही थे। शास्त्र-ज्ञान से अनभिज्ञ होने के कारण परमहंसजी ने मूर्त्तिपूजा की आर्य (हिन्दू) शास्त्रों के अनुसार आलोचना करने की आवश्यकता ही अनुभव नहीं की। परमहंस की

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ही विचारसारणि का अनुवर्तन करते हुए उनके विश्वविख्यात शिष्य स्वामी विवेकानन्द ने भी मूर्त्तिपूजा के समर्थन में अनेक मन:कल्पित युक्तियाँ एवं हेतु प्रस्तुत किये, यद्यपि उनमें से भी अधिकांश तो शब्दाडम्बरपूर्ण घटाटोप युक्त हेत्वाभास ही थे तथापि स्वामी विवेकानन्द ने मूर्त्तिपूजा की निस्सारता को अनुभव किया था तथा राष्ट्र को जड़ता से ग्रस्त, पराधीन, परावलम्बी एवं पूर्ण नि:सत्त्व बनाने में इस विधान की महत्ती भूमिका को भी समझा था, फलत: उन्होंने अपने लेखन में अनेकत्र मूर्त्तिपूजा का प्रचण्ड खण्डन भी किया। इस प्रकार कहीं समर्थन और अन्यत्र खण्डन कर विवेकानन्द ने खुद ही अपने मूर्त्तिपूजा-विषयक विचारों को, वदतोव्याघात के दोष से दूषित कर दिया।

रामकृष्ण और विवेकानन्द की सरणि का ही अनुसरण करते हुए इस शताब्दी में कुछ ऐसे धार्मिक चिन्तक और प्रचारक उभरे हैं जो अपनी आकर्षक भाषा, अनेक प्रकार की आकर्षक युक्तियों, अलंकार-योजना तथा विचारों के घटाटोप का निर्माण कर मूर्त्तिपूजा के समर्थन में तत्पर हुए हैं। शास्त्रों से अनभिज्ञ अथवा अंग्रेजी भाषा और मुहावरों के प्रयोग से आक्रान्त नवशिक्षित समुदाय को सहज में ही आकर्षित करनेवाली बातों से मुग्ध व्यक्ति इन लोगों के विचारों का सहज ही अनुगामी बन जाता है। मूर्त्तिपूजा के ऐसे ही समर्थक तथा प्रचारक श्री पाण्डूरंग शास्त्री आठवले नामक एक महाराष्ट्रदेशीय सज्जन हैं, जिन्होंने 'स्वाध्याय' के नाम से अपना एक नया सम्प्रदाय खड़ा किया है। वे देश-विदेश में भ्रमण कर अपने विचारों का प्रचार करते हैं। उनके अनुयायियों ने उन्हें साक्षात् ईश्वर का अवतार तथा जग का सिरजनहार मान लिया है।

आठवले शास्त्री द्वारा मूर्त्तिपूजा का समर्थन

आठवले शास्त्रीजी के विचारों का संकलन उनके अनुयायियों द्वारा किया जाकर सद्विचार दर्शन ट्रस्ट बम्बई के द्वारा विभिन्न पुस्तकों में प्रकाशित किया गया है। मूर्त्तिपूजाविषयक उनके ऐसे ही विचार इसी शीर्षक से २०४२ वि० में प्रकाशित हुए हैं। हम आगे आठवले शास्त्रीजी के इन्हीं विचारों की समीक्षा करेंगे। अपनी विवेचना के आरम्भ में ही आठवले शास्त्रीजी ने मूर्त्तिपूजा को वैदिक ऋषियों की मनुष्य को प्रदत्त एक अनुपम भेंट कहा है। ऐसा लगता है कि उन्हें कभी वेदों के दर्शन करने का भी अवसर नहीं मिला अन्यथा वे वैदिक ऋषियों पर मूर्त्तिपूजा का लांछन नहीं लगाते। वेद के सभी अध्येता चाहे वे एतद्देशीय हैं या अन्य देशस्थ, इस बात से सहमत हैं कि वैदिक संहिताओं में मूर्त्तिपूजा का विधान कहीं भी नहीं है। वेदों ने तो परमात्मा को शुक्र, अकाय, अव्रण, अपापविद्ध, स्वयंभू-जैसे विशेषणों से सम्बोधित कर स्पष्ट घोषणा की है कि महान् यशवाले उस परमपिता की कोई

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रतिमा, प्रतिकृति, अनुकृति अथवा प्रतीक नहीं है। शास्त्रीजी ने इसी क्रम में मूर्त्तिपूजा को एक पूर्ण शास्त्र कहा है। पता नहीं वे शास्त्र किसे कहते या मानते हैं। वैदिक शास्त्रों में तो हमें कहीं भी मूर्त्तिपूजा का विधान दृष्टिगोचर नहीं होता। वे मूर्त्तिपूजा को मोक्ष प्राप्त करानेवाला कहते हैं जबकि वेदशास्त्र तो ज्ञान, भक्ति, उपासना, योगसाधना आदि को मोक्ष-प्राप्ति का साधन बताते हैं। पुराणों को छोड़कर किसी शास्त्र ने मूर्त्तिपूजा को मोक्ष का प्रापक नहीं कहा। यदि मूर्त्तिपूजा ही मोक्ष का साधन होती तो **'ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः'** (सांख्य० ४।१९) जैसे वाक्यों का प्रचलन क्यों होता जो स्पष्ट ही ज्ञान को मुक्ति का हेतु मानते हैं। इससे भिन्न **विद्ययामृतमश्नुते** (यजुः० ४०।१४) तथा **''तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय''** (यजुः० ३१।१८) आदि वैदिक वाक्य इस तथ्य की तारस्वर से घोषणा करते हैं कि परमात्मा के वास्तविक स्वरूप को जानकर ही मृत्यु पर विजय प्राप्त की जा सकेगी और अध्यात्मविद्या के द्वारा ही अमृतत्व को पाया जा सकता है।

शास्त्रीजी की मूर्त्तिपूजा-विषयक युक्तियों का खण्डन

वस्तुतः आठवले शास्त्रीजी द्वारा मूर्त्तिपूजा के समर्थन में जो युक्तियाँ अथवा तर्क प्रस्तुत किये हैं वे सर्वथा निस्सार ही हैं। यथा वे कहते हैं कि मूर्त्तिपूजा की शक्तिपूजा करनेवाले मनुष्य की समझदारी एवं कौशल पर निर्भर करती है। यहाँ विचारने की बात है कि समझदारी से या युक्तिसिद्ध मूर्त्तिपूजा करने की बात ही व्यर्थ है। अधिकांश मूर्त्तिपूजक तो गतानुगति या अन्धश्रद्धापूर्वक ही इस कृत्य में लिप्त रहते हैं। वे न तो यह जानते हैं कि हम जिस वस्तु की पूजा कर रहे हैं, वह जड़ है और न उन्हें यही पता रहता है कि यह स्थूल मानव-निर्मित प्रतिमा हमारी अभिलाषाओं, आकांक्षाओं तथा मनोरथों को पूरा करने में सर्वथा असमर्थ है। मूर्त्तिपूजा तो मात्र भेड़-चाल है। आज से चालीस-पचास वर्ष पूर्व वैष्णोदेवी के मन्दिर में दर्शनार्थ जानेवाले भक्तों की संख्या कुछ हज़ार ही थी किन्तु अब यह लाखों तक पहुँच गई है, तो इसका कारण यह नहीं है कि ये भक्तगण कुछ समझ-बूझकर या मूर्त्तिपूजा की तार्किक समीक्षा कर इस कर्म में प्रवृत्त हुए हैं। यह मात्र अन्धानुकरण ही है। शास्त्रीजी ने यह दावा किया है कि मूर्त्तिपूजा जीवन के विकास में आदि से अन्त तक हमारे साथ ही रहती है। यह उक्ति भी सर्वथा मिथ्या ही है, क्योंकि मूर्त्तिपूजा को न अपनाकर अपितु उसका प्रचण्ड विरोध करके भी नानक, दादू, सुन्दरदास, रैदास, दयानन्द, राममोहनराय आदि सहस्रों महापुरुषों ने अपने आध्यात्मिक जीवन का विकास किया है।

सैमेटिक मतों में जड़पूजा

शास्त्रीजी के चिन्तन में विचित्र विरोधाभास के दर्शन होते हैं। वे भारतीय

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

धर्म-सुधारकों द्वारा किये गये मूर्त्तिपूजा विरोध से तो अप्रसन्नता अनुभव करते हैं जबकि सैमेटिक मतों में किये गये मूर्त्तिपूजा विरोध को सह लेते हैं। यथा वे लिखते हैं—सैमेटिक धर्म के लोगों का मूर्त्तिपूजाविरोध थोड़ा तार्किक है। उनके तर्क समझने लायक हैं तथा उनका तर्क तर्कसंगत है, किन्तु शास्त्रीजी को यह पता नहीं कि ईसाइयत या इस्लाम ने मूर्त्तिपूजा का शाब्दिक विरोध भले ही किया हो व्यवहारतः वे हिन्दुओं से भी अधिक मूर्त्तिपूजक हैं। कैथोलिक ईसाईयों में तो मूर्त्तिपूजा उसी प्रकार प्रचलित है जिस प्रकार हिन्दुओं के विभिन्न पौराणिक समुदायों में। उनके उपासना-गृहों में मेरी तथा ईसा की प्रस्तर-निर्मित प्रतिमाओं के समक्ष दीप जलाये जाते हैं, धूप जलाया जाता है। आरती की भाँति घण्टानादपूर्वक मूर्त्ति के समक्ष प्रणिपात करते हुए भजन गाये जाते हैं। यह कैथोलिक कर्मकाण्ड किसी भी हिन्दु-मन्दिर में किये जानेवाले आडम्बरयुक्त क्रिया-जाल से भिन्न नहीं है। उसी प्रकार इस्लाम में भी मक्का के काबा-स्थित संगे असवद को चूमना, पीरों की दरगाहों में जाकर कब्रों पर चादर चढ़ाना, धूप-बत्ती जलाना, पुष्प अर्पित करना तथा मकबरों में गड़े मुर्दों के जड़ स्मारकों के आगे सिजदा करना मूर्त्तिपूजा से भी बदतर है तथापि शास्त्रीजी में यह साहस नहीं कि वे सैमेटिक मजहबों की मूर्त्तिपूजा की आलोचना करें। वे तो इतना मात्र ही करते हैं कि इन सैमेटिक मतवालों को मूर्त्तिपूजा का शास्त्रीय रहस्य कोई नहीं बताता। मैं उनसे पूछता हूँ मूर्त्तिपूजा का शास्त्रीय रहस्य आखिर है क्या, और उसे हिन्दुओं के किस शास्त्र में लिखा गया है। वस्तुतः वेद, उपनिषद, स्मृति, सूत्र आदि जिन ग्रन्थों को हम शास्त्र कहते हैं उनमें तो कहीं भी मूर्त्तिपूजा का उल्लेख या उसकी सामान्य चर्चा भी नहीं है, उसका रहस्य बताना तो दूर रहा। यदि पुराणों को भी हम शास्त्रों में गिन लें तो वहाँ भी मूर्त्ति-पूजा को अल्प बुद्धिवालों के लिए ही विधेय कहा गया है और उसमें किसी प्रकार के रहस्य होने की बात नहीं कही गई है। पुनः यदि वादितोषन्याय से हम मूर्त्तिपूजा के किसी शास्त्रीय रहस्य को मान भी लें तो उसे ईसाई, मुसलमान आदि कब मानने के लिए तैयार होंगे।

मूर्त्तिपूजा से अन्तकरण-शुद्धि नहीं

आठवले शास्त्रीजी अन्तःकरण की पवित्रता तथा चित्तशुद्धि के लिए मूर्त्तिपूजा को जरूरी मानते हैं, किन्तु वे यह भूल जाते हैं कि उपनिषद् एवं गीतादि आध्यात्मिक शास्त्रों में मूर्त्तिपूजा को कहीं भी अन्तःकरण-शुद्धि तथा मनःशुद्धि का कारण नहीं बताया गया। इसके विपरीत यम-नियमादि का आचरण, निरन्तर योगाभ्यास, वैराग्य तथा अन्य आध्यात्मिक वृत्तियों के सेवन को ही अन्तःकरण शुद्धि का हेतु माना गया है। शास्त्रीजी का यह विवेचन वस्तुतः अंग्रेजी पढ़े-लिखों, किन्तु संस्कृतशास्त्रों से सर्वथा अनभिज्ञ अभिजात वर्गीय लोगों को प्रभावित भले ही कर ले किन्तु वेदादि

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रामाणिक शास्त्रों के मनीषियों को उनकी इन युक्तियों और हेतुओं से प्रभावित नहीं किया जा सकता।

ईश्वर निर्गुण-निराकार है सगुण-साकार नहीं

यहाँ एक और तथ्य ध्यातव्य है। जब आर्यसमाज ने मूर्त्तिपूजा का शास्त्रीय आधार लेकर खण्डन किया तो सनातनी पौराणिक समुदाय ने मूर्त्तिपूजा के समर्थन में नाना हेतुओं, युक्तियों और तर्कों का वाग्जाल-सा रच दिया और शास्त्रार्थों में इनकी सहायता से जड़पूजा को युक्तियुक्त सिद्ध करने का प्रयास किया। उन्होंने हिन्दु-शास्त्रों से कुछ ऐसे उद्धरण भी ढूँढ निकाले जिनसे उनके मतानुसार मूर्त्तिपूजा को मान्यता दी जा सकती थी, चाहे ऐसा करने में उन्हें इन शास्त्र-वचनों के अर्थ का अनर्थ ही क्यों न करना पड़ा। इसी प्रकार उन्होंने ईश्वर की सगुणता और निर्गुणता को साकार तथा निराकार का पर्याय ठहराया और सगुण-साकार तथा निर्गुण-निराकार के समीकरण बनाकर साकारवाद की स्थापना की और तज्जन्य मूर्त्तिपूजा के विधान को मान्य ठहराया। आठवले शास्त्रीजी का विवेचन भी कुछ इसी प्रकार का है, जब वे कहते हैं कि "वैदिकों ने भगवान् के दोनों स्वरूप सगुण-साकार और निर्गुण-निराकार स्वीकृत किये हैं।" ऐसा लिखते समय वे यह भूल जाते हैं कि उपनिषद् आदि वैदिक शास्त्रों में परमात्मा को कहीं सगुण और कहीं निर्गुण तो वर्णित किया किन्तु उसको साकार, किसी भी प्रकार के भौतिक, स्थूल आकारवाला तथा मनुष्याकृतिवाला नहीं कहा। इसके विपरीत यत्र तत्र अशब्दं, अस्पृश्यं, अदृश्यं कहकर उसके अगोचर, इन्द्रियातीत तथा रूप, रस, गन्ध, स्पर्श आदि से रहित होने का ही प्रतिपादन किया है। यदि उसे सगुण कहकर वर्णित किया गया तो यह भी स्पष्ट कर दिया गया कि उसके ज्ञान, बल, क्रिया आदि स्वाभाविक हैं। वह इसके लिए किसी अन्य का मोहताज नहीं है। द्रष्टव्य—

स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च। —श्वेताश्वतरोपनिषद् ६।८

वस्तुतः ऋषि दयानन्द ही प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने यह स्पष्ट किया कि सगुण होने का अर्थ साकार होना नहीं है। ईश्वर में सगुणता और निर्गुणता तो दोनों ही सहचारीभाव से विद्यमान हैं किन्तु वह साकार कदापि नहीं है। वेदादि शास्त्रों में ईश्वर के कभी किसी भी दशा में आकार ग्रहण करने, मनुष्य अथवा किसी अन्य योनि में जन्म लेकर शरीरधारी होने का उल्लेख नहीं है। इसलिए शास्त्रीजी की यह मीमांसा उचित नहीं है कि जो सगुण है वही साकार है। हाँ, जिन अनेक गुणों के न होने के कारण ईश्वर को निर्गुण कहा जाता है, उनमें आकार के न होने के कारण उसे निराकार कहना तो युक्तियुक्त ही है।

आठवले शास्त्रीजी ने साकार और सगुण के एक साथ होने में जो एक विचित्र

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
उदाहरण दिया है वह इस प्रकार है। कोई व्यक्ति जब प्रगाढ़ निद्रा में सोया रहता है तब तो वह निर्गुण अवस्था में ही रहता है, अर्थात् उसे अमीर, गरीब, शिक्षित-मूर्ख आदि कुछ भी नहीं कहा जा सकता, किन्तु जग जाने पर वह इन्हीं गुणों को धारण कर लेता है, तथैव ईश्वर भी कभी निर्गुण-निराकार अवस्था में तो कभी सगुण-साकार अवस्था में रह सकता है। स्पष्ट ही यह युक्ति तर्क की कसौटी पर खरी नहीं उतरती। शरीरधारी मनुष्य तो शारीरिक एवं मानसिक शक्तियोंवाला, सीमित सामर्थ्ययुक्त प्राणी है, किन्तु परमात्मा उससे सर्वथा भिन्न, शरीर—आकृतिरहित, चिन्मय सत्ता है। इसलिए उसके लिए सोने-जागने आदि का प्रयोग निरर्थक है। यह तुलना ही ग़लत है। वह हर स्थिति में एकरस, निर्लेप, सर्वव्यापक है, अतः किसी स्थानविशेष में उसका जन्म धारण करना तथा शरीरधारी बनना भी अशक्य है।

मूर्त्तिपूजा के समर्थन में दिये गये हेत्वाभास

वस्तुतः आठवले शास्त्रीजी का मूर्त्तिपूजा विषयक समग्र विवेचन ही हेत्वाभासों पर आधारित है। वे कहते हैं कि "वैदिकों की दृष्टि में भगवान् का आकार है फिर भी वे सर्वव्यापक हैं।" एक ओर भगवान् को आकारवाला बताना किन्तु साथ ही उन्हें सर्वव्यापक भी कहना एक ऐसा विरोधाभास है जो तर्क के प्रहार को सहने में असमर्थ है। जो आकारवाली वस्तु है, वह अपने सीमित स्थान को ही ग्रहण करेगी, उसमें सर्वव्यापकता कदापि नहीं हो सकती। इसीलिए शास्त्रों में उसे सर्वव्यापक तो सर्वत्र कहा गया किन्तु उसका आकार नहीं बताया गया। शास्त्रीजी आगे कहते हैं "मूर्त्तिपूजा के द्वारा चित्त की एकाग्रता सम्भव है।" यह कथन भी त्रुटिपूर्ण है। चित्त की एकाग्रता के लिए तो उसे बाह्य विषयों से पृथक् करना पड़ता है, जबकि मूर्त्तिपूजा तो बाह्य विषय-प्रधान ही है। मूर्त्तिपूजक जब बार-बार मूर्त्ति को पूजने के लिए कभी पाद्य और अर्घ्य के लिए जल देता है, देवता के स्नान, आचमन के लिए जल लाता, धूप, दीप, नैवेद्य आदि की व्यवस्था करता है तो उसे अपने चित्त को बार-बार बाह्य विषयों में ही नियोजित करना पड़ता है। सांख्यदर्शन में '**ध्यानं निर्विषयं मनः**' (६।२५) कहकर मन को निर्विषय बनाने को ध्यान का लक्षण कहा गया जबकि मूर्त्तिपूजक का तो सारा ध्यान ही जड़ प्रतिमाओं की पूजा-अर्चना में लग जाता है, अतः मूर्त्तिपूजा की विधि चित्त में विक्षेप तो पैदा करती है, उसे एकाग्र नहीं होने देती।

योगदर्शन में जहाँ चित्त की स्थिरता और एकाग्रता के लिए जिन साधनों को अपनाने के लिए कहा गया वहाँ भी मूर्त्तिपूजा को उसका हेतु नहीं बताया। शास्त्रीजी की त्रुटि चिन्तनप्रणाली के कुछ नमूने देखिए—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

१. भगवान् की मनुष्य-आकार की मूर्त्ति ही मानव के लिए सहज साधन है।

२. जिस अदृश्य शक्ति—प्रभु ने इन अनन्त आकारों का निर्माण किया है वह क्या अपने लिए एक भी आकार का निर्माण नहीं कर सकती?

३. पत्थर से बनाई गई मूर्त्ति भी चैतन्यपूर्ण होने के कारण भगवान् उसमें भी हो सकते हैं। इन हेत्वाभासों के उत्तर इस प्रकार हैं—

(१) भगवान् की कोई मनुष्याकार मूर्त्ति बनाना या बनना सम्भव ही नहीं है। वेदादि शास्त्रों में जहाँ परमात्मा को आलंकारिक दृष्टि से हस्त-पादादियुक्त बताया है वहाँ भी उसे सहस्त्रशीर्षा, सहस्त्राक्ष तथा सहस्त्रपाद कहा। उसके नेत्रों के रूप में सूर्य और चन्द्रमा, भुजाओं के रूप में दिशाओं आदि की कल्पना यह बताती है कि वह ऐसा शरीरधारी नहीं है जैसा कोई दो हाथ-पाँववाला मनुष्य होता है। यदि वह स्वयं ही शरीरधारी हो जाता तो उसमें और जीवात्मा में अन्तर ही क्या रह जाता।

(२) यह तो सत्य है कि परमात्मा सर्वशक्तिमान् है, किन्तु उसका यह अर्थ नहीं कि परमात्मा स्वनियम तथा व्यवस्था के प्रतिकूल कोई कार्य कर अपनी शक्ति का दुरुपयोग करे। परमात्मा के अपने अटल, अविचलित तथा शाश्वत नियम हैं। वह स्वयं भी उन नियमों का पालन करता है। उसे कर्तुं, अकर्तुं अन्यथाकर्तुं कहकर स्वेच्छाचारी नहीं बनाया जा सकता। पुनः संसार-संचालन के लिए उसका शरीरधारी होना भी आवश्यक नहीं है। एक कुम्हार मिट्टी से अनेक प्रकार के घटादि पात्रों का निर्माण करता है, किन्तु वह स्वयं पात्र नहीं बन सकता। इसी प्रकार परमात्मा अपनी अनन्त शक्ति से संसार की रचना, स्थिति और संहार तो करता है किन्तु ऐसा करने के लिए उसे किसी आकार ग्रहण करने की आवश्यकता नही पड़ती।

(३) पत्थर से बनी मूर्त्ति में परमात्मा अपनी सर्वविद्यमानता के कारण उपस्थित तो है किन्तु न तो वह मूर्त्ति चैतन्य है और न ही उपास्य। सबसे बड़ी बात तो यह है कि उपासना तभी सम्भव होती है जहाँ उपास्य और उपासक का सान्निध्य होता है। अध्यापक के सान्निध्य में रहकर विद्यार्थी कुछ सीख सकता है। मूर्त्ति में परमात्मा तो है, किन्तु वहाँ उपासक जीवात्मा नहीं है, इसलिए मूर्त्तिमय परमात्मा से उसकी निकटता सम्भव ही नहीं है। उसे तो हृदयदेश के भीतर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ही देखा और जाना जा सकता है। उपनिषद् तथा गीतादि शास्त्रों में भी अनेकत्र उसे हृदय के भीतर ही देखने और जानने के लिए कहा गया है। **''तमात्मस्थं ये अनुपश्यन्ति धीराः''** (५।१३) तथा **'हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति'** (गीता १८।६१) जैसे आर्षवाक्यों की उपस्थिति में यह मानना सर्वथा ग़लत है कि जड़ मूर्त्ति के द्वारा ईश्वर का साक्षात्कार सम्भव है।

यहाँ शास्त्रीजी ने एक और विचित्र बात कही है। वे कहते हैं कि ''ऋषि ने समाधि में भगवान् का जो रूप देखा उसका स्मृति के रूप में वर्णन किया और उसके अनुसार ही शिल्पी ने मूर्त्ति खड़ी की।' क्या वे यह नहीं मानते कि मूर्त्ति तो शिल्पी के द्वारा बनाई जाती है, इसलिए इसे शिल्पी की कल्पना ही कह सकते हैं। सत्य तो यह है कि समाधि अवस्था में तत्त्वद्रष्टा ऋषिगण परमात्मा के जिस स्वरूप को देखते हैं वह सर्वथा अनिर्वचनीय होता है। उसे वाणी द्वारा तो व्यक्त किया ही नहीं जा सकता। **न शक्यते वर्णयितुं गिरा तदा०** (मैत्रायणी उप० ४।४।१) वह अदृश्य, अस्पृश्य तथा अवर्ण्य होता है। उसका किसी स्थूल मूर्त्ति से कोई लेना-देना नहीं होता। जब ऋषिगण उसे अवर्णनीय कहते हैं तो भला किसी आँख, कान, मुँहवाली स्थूल प्रतिमा को उसका प्रतीक कैसे कहा जा सकता है और यह बात भी सत्य है कि मूर्त्ति का आकार तो शिल्पी ही देता है और शिल्पियों की भिन्नता के कारण मूर्त्तियों के आकार-प्रकार भी भिन्न होते हैं। भारत में राम, कृष्ण, शिव आदि के लाखों मन्दिर हैं और इनमें स्थापित इन देवताओं की प्रतिमाएँ भी रूप, रंग, आकार, आयुध, परिकर आदि की दृष्टि से एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न हैं। शिव को ही लीजिए, कहीं शिव लिंगाकार पूजे जाते हैं तो कहीं मनुष्याकार, कहीं उन्हें पंचमुख चित्रित किया गया तो कहीं एक मुखवाला। क्या इन देवताओं के ये विभिन्न रूप, रंग, आकार-प्रकार वैदिक ऋषियों ने बताये थे और क्या राम, कृष्णादि के इन भिन्न-भिन्न रूपों को ऋषियों ने समाधि अवस्था में देखा था? कदापि नहीं।

शास्त्रीजी की एक युक्ति यह है कि जब एक बार किसी मूर्त्तिकार ने गणेश की क्रिकेट खेलते हुए की प्रतिमा बना दी तो वह भक्तों द्वारा अस्वीकार कर दी गई, किन्तु विचार की बात तो इतनी ही है कि गणेश की पुराणकथित आकृति भी तो सर्वथा कल्पित ही है, उसके लिए कोई शास्त्रीय आधार तो है नहीं। मूर्त्तियों की भिन्नता तथा उनमें असमानता उनके निर्माता कारीगरों का ही कमाल है और उनकी मूल कल्पना के लिए वे पुराणकार जिम्मेवार हैं, जिन्होंने निर्गुण-निराकार परमात्मा की उपेक्षा कर स्वकल्पना के आधार पर उसकी मनुष्यरूप में अवतारणा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

की।

आठवले शास्त्रीजी का कहना है कि शिव, विष्णु, कृष्ण आदि की मूर्त्तियाँ ऋषियों की हैं तथा उन्होंने जिस रूप में भगवान् को एकाग्रचित्त से देखा उन देवताओं की मूर्त्तियाँ बनाई हैं। यह कथन भी पूर्णतया असंगत, काल्पनिक तथा प्रमाणशून्य है, क्योंकि राम, कृष्ण आदि महापुरुषों की मूर्त्तियाँ तो रामायण, महाभारत आदि ऐतिहासिक ग्रन्थों में वर्णित उनके रूप, आकार, वर्ण, शरीराकृति के आधार पर बनाई गईं जबकि शिव, विष्णु, आदि की मूर्त्तियों को उनके पुराणवर्णित स्वरूप के आधार पर बनाया गया है। ऋषियों ने एकाग्र होकर अपने मानस चक्षुओं में इन्हें देखा, यह सर्वथा भ्रान्त कथन है, जिसका कोई वर्णन शास्त्रों में उपलब्ध नहीं होता।

वेदों में मूर्त्तिपूजा नहीं

आर्यसमाज का नाम न लेकर शास्त्रीजी लिखते हैं कि कुछ लोगों को सन्देह है कि वेदों में मूर्त्ति-विषयक कल्पना नहीं है, किन्तु वे वेदों के ही कतिपय मन्त्र मूर्त्तिपूजा की सिद्धि में प्रस्तुत करते हैं, वस्तुतः यह सारे प्रमाण शास्त्रीजी ने उन सनातनधर्मी विद्वानों के ग्रन्थों से एकत्र किये हैं जिन्हें आर्यसमाज एवं पौराणिक विद्वानों के बीच होनेवाले मूर्त्तिपूजा विषयक शास्त्रार्थों में आर्यसमाज के मन्तव्य के विरोध में प्रतिपक्षी पण्डितों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। इन मन्त्रों के वास्तविक अर्थों की मीमांसा बहुत बार की जा चुकी हैं और यह बताया जा चुका है कि इनसे मूर्त्तिपूजा का कथमपि समर्थन नहीं होता। उदाहरणार्थ, **या ते रुद्र शिवा तनूः** (सभी मन्त्र यजुर्वेद के १६वें अध्याय से लिये हैं) **नमो नीलग्रीवाय, नमः कपर्दिने, नमो निषङ्गिणे इषुधिमते, नमः सोमाय च रुद्राय च, नमो हरिकेशाय, नमो हिरण्यबाहवे** आदि जो मन्त्र शिवप्रतिमा-पूजन के समर्थन में उन्होंने प्रस्तुत किये उनके वास्तविक अर्थों से वे अनभिज्ञ थे।

यजुर्वेद का यह रुद्राध्याय रुद्र देवता को समर्पित है और भाष्यकारों के अनुसार यहाँ रुद्र परमात्मा, सेनापति और वैद्य के लिए प्रयुक्त हुआ है। इन मन्त्रों से किसी पौराणिक रुद्र का अर्थ लेना तथा उसकी वैसी मूर्त्ति की पूजा को मानना मन्त्रों के वास्तविक अर्थों से अपनी अनभिज्ञता सूचित करना है। यदि वादितोषन्याय से यजुर्वेद के इन मन्त्रों में वर्णित रुद्र के नीलग्रीव, शितिकण्ठ, कपर्दिन, व्युप्तकेश, हिरण्यबाहू आदि विशेषणों के पुराणवर्णित अर्थ स्वीकार भी कर लिये जाएँ तो इस रुद्र को जल, पंचामृत, धूप, दीप, नैवेद्य आदि से पूजा करने का आदेश मन्त्र के किस शब्द से व्यक्त होता है। यहाँ तो सर्वत्र ऐसे रुद्र को नमस्कार करने का आदेश है और "नमः" का निरुक्तपरक अर्थ आदर, सत्कार, अन्नदान, यहाँ तक कि दण्डित करना भी है। यजुर्वेद के किसी भी प्राचीन या नवीन पौरस्त्य या पाश्चात्य भाष्यकार ने

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रुद के इन मन्त्रों के मूर्त्तिपूजापरक अर्थ नहीं किये। यदि शास्त्रीजी पौराणिक पण्डित ज्वालाप्रसाद मिश्र, कालूराम शास्त्री, अखिलानन्द शर्मा तथा माधवाचार्य आदि के अन्धानुकरण को छोड़कर किसी भी वेदज्ञ के किये इन मन्त्रों के अर्थों का विचार करते तो वे वेदों से मूर्त्तिपूजा सिद्ध करने का दुस्साहस नहीं करते। उन्होंने ऋग्वेद (२।३३।४) के मन्त्र को उद्धृत किया और अर्थ करते हुए लिखा है, "हे शंकर! वैद्यों के उत्कृष्ट वैद्य के रूप में तेरे बारे में सुनता हूँ। यहाँ रुद्र को वैद्यों में श्रेष्ठ वैद्य तो कहा गया, किन्तु उसकी प्रतिमा की पूजा तो नहीं कही गई।

इसी प्रकार उन्होंने **इदं विष्णुर्विचक्रमे** (ऋग्वेद २।२२।१७) इस विष्णु देवता के मन्त्र का जो अर्थ किया है उससे भी मूर्त्तिपूजा की कोई ध्वनि नहीं निकलती। मनुस्मृति में जो देवतागार (९।२८०) तथा प्रतिमा (९।२८५) शब्द आये हैं वे भी विष्णु, शिव आदि की देवमूर्त्तियों की पूजा के विधायक नहीं हैं। कारण कि देवतागार यज्ञशाला का वाचक है जबकि प्रतिमा वस्तु को तोलने के बाट के लिए प्रयुक्त हुआ है। यदि मनु के युग में मूर्त्तिपूजा का प्रचलन होता तो मूर्त्तियों को तोड़नेवाले उस युग में कहाँ से पैदा हो गये थे जिनको दण्डित करने के लिए इस श्लोक में '**प्रतिमानां च भेदकः**' कहा गया। वस्तुतः मूर्त्तिभंजक इस्लाम का उदय तो आज से १५०० वर्ष पहले हुआ जबकि मनु का काल उससे बहुत प्राचीन है, अतः मूर्त्तिपूजा को मनु से सिद्ध करना ग़लत है।

इसे दुस्साहस ही कहा जाएगा कि वैदिक संहिताओं तथा मनुस्मृति से कुछ मन्त्रों एवं श्लोकों को मनमाने ढंग से उद्धृत कर तथा उनके कपोलकल्पित अर्थ कर शास्त्रीजी ने मूर्त्तिपूजा सिद्ध करने का असफल प्रयास किया। अब वे पातंजल योगदर्शन के द्वारा मूर्त्तिपूजा सिद्ध करने के लिए उतारू हुए। सम्पूर्ण १९४ सूत्रों में उन्हें केवल एक सूत्र '**देशबंधचितस्य धारणा**' (३।९) ही ऐसा मिला, जिसे उन्होंने अपने पक्ष के समर्थन में प्रस्तुत किया और बिना इस बात का विचार किये कि 'धारणा' नामक योगाङ्ग की परिभाषा देनेवाले इस सूत्र का मूर्त्तिपूजा से दूर का भी सम्बन्ध नहीं है, यह लिख बैठे कि योगदर्शन में मूर्त्ति की आवश्यकता पर ज़ोर दिया गया है। उन्होंने देशबन्ध का अर्थ मूर्त्तिपूजा कैसे लिया, इसपर ही हमें आश्चर्य होता है। योगसूत्र पर व्यास का भाष्य है, भोजराज की वृत्ति है तथा वाचस्पतिमिश्र की टीका भी है। इसके अतिरिक्त सैकड़ों विद्वानों ने योगसूत्रों की व्याख्याएँ लिखी हैं, किन्तु किसी ने उक्त सूत्र को मूर्त्तिपूजा का विधायक नहीं बताया।

मनोवैज्ञानिक मूर्त्तिपूजा का समर्थक नहीं

आगे शास्त्रीजी मनोवैज्ञानिक दृष्टि से मूर्त्तिपूजा की आवश्यकता बताते हैं। वे कहते हैं कि भगवान् का आकार (अवतार) लेना यदि हम मान्य करते हैं तो

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
वे मनुष्य का ही आकार लेते हैं। उनका यह कथन भी अवतारवाद के पौराणिक सिद्धान्त के प्रतिकूल है। जिन पुराणों में ईश्वर के शरीरधारी होकर आकार ग्रहण करने की बात की है, उन्होंने उसकी कल्पना केवल मनुष्य के आकार में ही नहीं की, हिन्दुओं के इन तथाकथित शास्त्रों में तो ईश्वर का मछली के रूप में (मीनावतार) कछुए के रूप में (कूर्मावतार) पक्षी के रूप में (हंसावतार), पशु के रूप में (वराह अवतार) आधे पशु तथा आधे मनुष्य के रूप में (नृसिंह अवतार) तथा अन्ततः परिपूर्ण के रूप में (राम, कृष्ण, बुद्धादि के रूप में) अवतरित होना बताया है। शास्त्रीजी यह क्यों भूल जाते हैं कि भारत में तो वराह तथा नृसिंह के मन्दिर भी बने हुए हैं और वहाँ पशु और मानव आकारवाले भगवान् की मूर्त्तियों की भी पूजा होती है, अतः मानवी मनोविज्ञान के आधार पर उनका मूर्त्तिपूजा का समर्थन व्यर्थ है। वे योगदर्शन के उस सूत्र का ग़लत अर्थ करते हैं जिसमें ईश्वर की परिभाषा देते हुए उसे कलेश, कर्म, विपाक तथा आशय से सर्वथा पृथक् पुरुष बताया है। पुरुषविशेष का 'साकार प्रभु' अर्थ उन्होंने कैसे कर लिया। दर्शनकार का अभिप्राय तो शरीररूपी पुरी में रहनेवाले जीवात्मा पुरुष से ब्रह्माण्डरूपी पुरी में निवास करनेवाले विशिष्ट तथा परमपुरुष परमात्मा का पार्थक्य बताना ही है, क्योंकि शरीरधारी पुरुष जहाँ क्लेश, कर्म, कर्मफल तथा उससे उत्पन्न संस्कारों से संलिप्त रहते हैं वहीं परमपुरुष या विशेषपुरुष परमात्मा इनसे सर्वथा पृथक् ही हैं। यही पतञ्जलि को अभिप्रेत था।

मूर्त्ति से चित्त की एकाग्रता नहीं

इसी प्रकरण में अनेक अप्रासंगिक बातें लिखने के पश्चात् शास्त्रीजी पुनः लिखते हैं कि जीवन-विकास के लिए मन की शुद्धि आवश्यक है, और चित्त की एकाग्रता के लिए मूर्त्तिपूजा की आवश्यकता है, किन्तु उनकी यह तर्कसरणी भी मनःकल्पित ही है, क्योंकि मूर्त्तिपूजा से चित्त का विश्रृंखलित होना, इधर-उधर भटकना तो सम्भव है, उससे एकाग्रता तो कदापि नहीं आती। जब मूर्त्ति पूजनेवाला कभी प्रतिमा को स्नान कराने, कभी उसे पाद्य, अर्घ्य, आचमन, नैवेद्य आदि अर्पित करने में ही लगा रहेगा तो उसके चित्त की एकाग्रता कैसे होगी। जो लोग वैष्णव मूर्त्तियों पर मिष्टान्न का प्रसाद चढ़ाते हैं, शिव-प्रतिमा पर बिल्व-पत्र, आक और धतूरे-जैसे विषैले वृक्षों के फल-फूल अर्पित करते हैं और भैरव तथा काली की मूर्त्ति के आगे पशुओं की बलि चढ़ाकर रक्त की धारा बहाते हैं अथवा उसे मदिरा-पान कराते हैं तो क्या वे यह सब चित्त की एकाग्रता के लिए करते हैं। क्या शास्त्रीजी में इतना साहस है कि वे मूर्त्तिपूजा के वैष्णवाचार, शैवाचार तथा वामाचार की इन उपर्युक्त विधियों का खण्डन करें, क्योंकि ये सभी विधान उन तथाकथित शास्त्रों

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
में ही उल्लिखित हैं जिनके आधार पर वे स्वयं मूर्त्तिपूजा के विधान को स्वीकार करते हैं। पुराण-वर्णित मूर्त्तिपूजा का चित्त की एकाग्रता से कोई सम्बन्ध नहीं है।

शास्त्रीजी का एक अन्य तर्क यह है कि जिस प्रकार सुप्तावस्था में मनुष्य आत्मनिष्ठ होने के कारण परमसुख या आनन्द की अनुभूति करता है, वैसा ही सुख और आनन्द जाग्रदवस्था में उसे मूर्त्तिपूजा में आता है, किन्तु यह तर्क नहीं अपितु तर्काभास है। योगदर्शन में तो समाधि अवस्था में पूर्णानन्द की उपलब्धि कही गई है न कि मूर्त्तिपूजा करते समय। तथ्य तो यह है कि मूर्त्तिपूजा से तो चित्त में विभ्रम, विक्षेप तथा भटकाव की ही स्थिति पैदा होती है, क्योंकि मूर्त्ति और उसके उपकरण सभी बाह्य और भौतिक होते हैं, अतः चेतन जीवात्मा को इनसे सुखोपलब्धि नहीं हो सकती।

इसी प्रकार की अन्य मनमानी युक्तियाँ प्रस्तुत करने के क्रम में वे लिखते हैं कि ध्यान के लिए मानव-आकार की मूर्त्ति को स्वीकार किया गया। यह मूर्त्ति भी मानवाकार में सुन्दर, आकर्षक, आत्मीय लगनेवाली होनी चाहिए। ऐसा लगता है कि शास्त्रीजी की इस मूर्त्तिपूजा विवेचना का हिन्दू पौराणिक ग्रन्थों तथा तत् प्रतिपादित मूर्त्तिपूजा विभाग से कोई लेना-देना नहीं है। यह सब तो उनका अपना वाग्जाल तथा स्वयं के द्वारा प्रसारित शब्दाडम्बर है, क्योंकि हिन्दू पौराणिक धर्म में मानवेतर मूर्त्तियों की पूजा भी प्रचलित है तथा, वक्रतुण्ड, महाकाय, लम्बोदर गणपति, मुण्डमाल धारणकर्त्ता शिव की दिगम्बर मूर्त्ति, काली और भैरव की डरावनी, त्रासदायक मूर्त्तियों की पूजा का भी विधान किया गया है, अतः सुन्दर आकर्षक और आत्मीय लगनेवाली मूर्त्तियों की पूजा को ही हिन्दू शास्त्रानुकूल बताना मात्र दिवास्वप्न है। काली, भैरव, शीतला तथा अन्य ग्रामदेवताओं की भयावनी और विकराल मूर्त्तियाँ भला किसी को कैसे आत्मीय लग सकती हैं। यदि शास्त्रीजी सुन्दर, आकर्षक और आत्मीय लगनेवाली राम, कृष्ण आदि की सौम्य मूर्त्तियों की ही पूजा की वकालत करते हैं तो उन्हें खुलकर काली, भैरव आदि की भयोत्पादक मूर्त्तियों की पूजा का खण्डन करने के लिए आगे आना चाहिए, किन्तु हम जानते हैं कि ऐसा करना उनके लिए कठिन है।

बहुदेववादी हिन्दूधर्म

मूर्त्तिपूजा की तथाकथित दार्शनिक व्याख्या करनेवाले स्वामी विवेकानन्द तथा तादृश लोगों के सामने एक बड़ी चुनौती तब आती है जब वे बहुदेववादी हिन्दूधर्म में प्रचलित सैकड़ों हज़ारों प्रकार के देवी-देवताओं की पृथक्-पृथक् मूर्त्तियों में विद्यमान नानात्व तथा पृथक्त्व का निषेध कर अपनी आडम्बरपूर्ण व्याख्यान-शैली में यह कह बैठते हैं कि इन सभी नाना आकार-प्रकारवाली मूर्त्तियों के माध्यम से

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भी मूर्त्तिपूजक एक अद्वितीय परमात्मा की ही पूजा करता है। आठवले शास्त्रीजी इसी स्वर-में-स्वर मिलाकर कहते हैं कि सभी देव एक समान हैं और कोई भी मूर्त्ति दूसरी मूर्त्ति से निम्न या भिन्न नहीं है। यदि यह बात सत्य है तब तो एक छोटे-से ग्राम के शिवमन्दिर में रक्खे शिवलिंग और रामेश्वर, ओंकारेश्वर, पशुपतिनाथ आदि के तथाकथित ज्योतिर्लिंगों में कोई तात्त्विक भेद होना ही नहीं चाहिए। तब ये मूर्त्तिपूजक हिन्दू अपने ही गाँव की शिवपिण्डी को छोड़कर सहस्रों कोस दूर इन तीर्थ-स्थलों में स्थापित उक्त ज्योतिर्लिंगों के दर्शन करने क्यों जाते हैं? यदि एक शाक्त उपासक के घर में प्रतिष्ठित देवी की प्रतिमा और कलकत्ते की काली में कोई मूलभूत अन्तर नहीं है तो मूर्त्तिपूजा में आसक्त व्यक्ति अपने गृह के देव-मन्दिर में स्थापित देवी की पूजा करके ही सन्तुष्ट क्यों नहीं होता। वह उज्जैन की हरसिद्धि या कालका, हिमाचल की ज्वालामुखी और कटरे की वैष्णोदेवी के दर्शनों के लिए पागल क्यों हो जाता है। वस्तुतः हिन्दुओं के बहुदेववाद को अस्वीकार करना तथा उसी के आधार पर सभी मूर्त्तियों में एक ही परमात्मा की सत्ता के होने की बात करना स्वामी विवेकानन्द तथा उनकी कोटि के विचारकों का कल्पनालोक में विचरण करना तथा बागाडम्बर खड़ा करना है। मूर्त्तिपूजा की स्थूलता, जड़ता तथा उसकी भौतिक आडम्बरपूर्ण स्थिति को नकारना सम्भव नहीं है।

आठवले शास्त्री तो इस प्रसङ्ग में यहाँ तक कह बैठे कि कोई मूर्त्ति दूसरी से श्रेष्ठ अथवा निम्न नहीं है। यही बताने के लिए हिन्दूधर्म में पंचायतन पूजा प्रचलित हुई। सत्य तो यह है कि आठवलेजी ने हिन्दू पुराणों को गम्भीरता से पढ़ा नहीं अन्यथा वे यह कभी नहीं लिखते कि पंचायतन पूजा से विष्णु, शिव, शक्ति, गणपति और सूर्य आदि देवताओं अथवा उनकी मूर्त्तियों की एकता तथा समानता सिद्ध होती है। वस्तुतः पंचायतन पूजा का तो प्रादुर्भाव ही तब हुआ जब हिन्दूधर्म बहुदेववाद तथा बहुमूर्त्तिवाद अपने नग्न रूप में प्रकट हुआ और एक परमात्मा की निराकारोपासना के सूर्य पर पौराणिक मत का ग्रहण लग गया। अब वेदप्रतिपादित एकेश्वरवाद के स्थान पर शिव, विष्णु आदि विभिन्न देवताओं की पूजा प्रचलित हुई और इन देवताओं को सर्वोपरि शक्तिवाला सिद्ध करने के लिए पृथक्-पृथक् पुराणों की रचना की गई। प्रत्येक देवता के भिन्न स्वरूप, उसके आकार-प्रकार, स्त्री-पुत्रादि परिकर, भिन्न वाहन, निवास, आयुध, अस्त्र-शस्त्र आदि की कल्पना की गई और वैष्णव शैव, शाक्त, गाणपत्य तथा सौर आदि सम्प्रदायों का प्रवर्त्तन हुआ। इन समुदायों का पारम्परिक वैर-विरोध इतना बढ़ गया कि शैवों ने वैष्णव प्रतिमा के दर्शन एवं अर्चन में पाप की कल्पना की तथा शैवों ने वैष्णवमत को त्याज्य ठहराया। सूर्य और गणपति आदि गौण देवताओं को भी महत्त्व प्राप्त हुआ और इन्हें सर्वोपरि सिद्ध करने के

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
लिए गणेशपुराण तथा सौरपुराण-जैसे कल्पित ग्रन्थ रचे गये, अतः पंचायतन पूजा के आधार पर मूर्त्तिपूजा में किसी प्रकार के औचित्य की तलाश व्यर्थ है।

गीता में मूर्त्तिपूजा नहीं

गीता (अध्याय १२।२) के आधार पर शास्त्रीजी ने जो मूर्त्तिपूजा का महत्त्व सिद्ध करना चाहा है वह भी उनका दुस्साहसमात्र ही है। इस श्लोक (मय्यावेश्य मनो ये) में जब उन्हें मूर्त्तिपूजा का कोई स्पष्ट संकेत दिखाई नहीं पड़ा तो वे यह लिखकर ही स्वयं को सन्तुष्ट करने लगे कि उसमें सगुणसाकार भक्ति का महत्त्व प्रतिपादित किया गया है, किन्तु श्लोक का अर्थ यह कहीं भी व्यंजित नहीं करता कि इसमें मूर्त्तिपूजा या साकारोपासना का प्रतिपादन है। श्लोक का अर्थ स्पष्ट है, "जो परमात्मा में मन लगाकर तथा नित्य युक्त होकर परा-श्रद्धा से उसकी उपासना करता है, वह कृष्ण की दृष्टि में सर्वश्रेष्ठ योगी है।"

आगे शास्त्रीजी लिखते हैं कि हमें मूर्त्ति को सर्वगुणसम्पन्न मानना चाहिए तभी उसका प्रभाव हमारे मन पर होगा। हमारा निवेदन है कि धातु अथवा प्रस्तर से बनी तथा किसी शिल्पी की कृति मूर्त्ति बेचारी सर्वगुणसम्पन्न कैसे होगी, सर्वगुणसम्पन्नता तो चैतन्य तत्त्वधारी मनुष्य में भी दुर्लभ है तब भला जड़, स्थूल प्रतिमा सर्वगुणसम्पन्न कैसे हो सकती है, शायद शास्त्रीजी के विचार में सुन्दर आकार-प्रकार तथा आकर्षक वस्त्राभूषणादि के शृंगार से युक्त मूर्त्ति ही सर्वगुणसम्पन्न होती है, किन्तु यह तो उनका बुद्धि भ्रम ही है। कारण स्पष्ट है। मूर्त्ति में चेतना नहीं है और आनन्द की तो उसमें कल्पना करना ही व्यर्थ है। तब भला उसमें शौर्य, पराक्रम, दया, उदारता आदि उदात्त गुणों का अस्तित्व कैसे सम्भव है? मूर्त्ति को देखकर उसके निर्माता कारीगर की प्रतिभा तथा निर्माण-कौशल-जैसे गुणों का पता चाहे लग जाए उसमें अन्य मानवोचित गुण तो शशशृंगवत् अनुपलब्ध हैं।

किसी समय लोकमान्य तिलक ने एक श्लोक के द्वारा हिन्दूधर्म में स्वीकृत कतिपय सर्वमान्य सिद्धान्तों की चर्चा की थी। उनके अनुसार वेदप्रामाण्य का स्वीकार, पुनर्जन्म में आस्था, उपास्य देवों तथा उनकी आराधना उपासना में अनेकता हिन्दूधर्म के सामान्य लक्षण हैं। तिलक प्रतिपादित हिन्दूधर्म के इन लक्षणों से इस धर्म का कोई एकात्मस्वरूप उभरकर हमारे सामने नहीं आता। यदि वेद की प्रामाणिकता तथा पुनर्जन्म की मान्यता को हिन्दूधर्म में अनिवार्यतः स्वीकार कर उसे एक स्पष्ट रूप देने का प्रयास किया गया तो उपास्य देवों की बहुलता तथा उनकी उपासना-विधि के वैविध्य को स्वीकार कर उसे नितान्त अस्तव्यस्त, एकता-विहीन विश्वासों के पुँज का रूप दे दिया गया। पौराणिक हिन्दूधर्म तो वैसा ही था जैसा तिलक ने उक्त श्लोक में बताया है, किन्तु सर्वाधिक प्राचीन विश्वधर्म

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
कहलाने का अधिकारी वेदप्रतिपादित धर्म उपास्य के रूप में एक, अद्वितीय, निराकार परमात्मा को ही आराध्य मानता था। उसे प्राप्त करने के लिए भी योगदर्शन तथा अन्य वैदिक अध्यात्मशास्त्रों में स्वीकृत उपासना प्रणाली को ही मान्यता देता था। इस वैदिक उपासना-प्रणाली में किसी भी प्रकार की स्थूल मूर्त्तिपूजा के लिए कोई स्थान नहीं था।

आठवले शास्त्रीजी के इस मूर्त्तिपूजा प्रतिपादन में पुनरुक्ति दोष तो पदे-पदे लक्षित होता है। वे अनेकत्र यह लिख चुके हैं कि मूर्ति सर्वगुणसम्पन्न, मंगलकर्तृत्व-पूर्ण, भावप्रधान, आकर्षक तथा श्रेष्ठ विकास की ओर ले-जानेवाली होनी चाहिए। हमारा निवेदन है कि मूर्त्ति जड़ होने से न तो सर्वगुणसम्पन्न होती है और न उसमें अपने पूजनेवालों का मंगल करने की शक्ति होती है। वह उन रागात्मक भावों की अभिव्यक्ति तो यत्किंचित्, सीमित मात्रा में कर सकती हैं जो उसके रचयिता शिल्पी ने अपनी कलात्मक प्रतिभा के द्वारा उसके मुख पर अंकित किये हैं, किन्तु भाव परिवर्तन करना उसके लिए शक्य नहीं है। वह आकर्षक भी हो सकती है तो जुगुप्सा जनक भी हो सकती है जैसीकि काली, भैरव आदि की भयानक मूर्त्तियों से सिद्ध है। शास्त्रीजी का भोलापन वहाँ पराकाष्ठा पर पहुँच जाता है जब वे मूर्त्ति को कर्तुं, अकर्तुं, अन्यथाकर्तुं सर्वथा समर्थ कहते हैं। कर्तुं, अकर्तुं, अन्यथाकर्तुं की शक्ति चैतन्य प्राणी में ही होती है, जड़ प्रतिमा में ये गुण या शक्ति नहीं होती। यदि मूर्त्ति कर्तुं, अकर्तुं होती तो वह अपनी पूजा के लिए पुजारी पर निर्भर नहीं होती। वह अपना दैनन्दिन कार्य स्वयं ही कर लेती और स्नानादि कार्यों तथा नैवेद्य, शयन आदि के लिए पुजारी की अपेक्षा नहीं रखती।

खेद की बात तो यह है कि आठवले शास्त्रीजी ने मूर्त्तिपूजा की सिद्धि के लिए यत्र-तत्र गीता को उद्धृत किया जबकि गीता के ७०० श्लोकों में एक भी श्लोक ऐसा नहीं है जो मूर्त्तिपूजा का उल्लेख करता हो। ऐसी स्थिति में मन के निग्रह के लिए कृष्ण के द्वारा बताये गये अभ्यास और वैराग्य-जैसे साधनों को मूर्त्तिपूजा के साथ कैसे जोड़ा जा सकता है? योगदर्शन में भी अभ्यास का उल्लेख हुआ तथा उसके नैरन्तर्य पर ज़ोर दिया गया, किन्तु इस अभ्यासरूपी साधना का मूर्त्तिपूजा से दूर का भी सम्बन्ध नहीं है। मन के ऊर्ध्वीकरण के लिए वे शास्त्रीय मूर्त्तिपूजा को एक साधन बताते हैं, किन्तु यह स्पष्ट नहीं करते कि शास्त्रीय मूर्त्तिपूजा का क्या अर्थ है। वैदिक और आर्षशास्त्रों में तो मूर्त्तिपूजा की कहीं भी चर्चा ही नहीं है।

शास्त्रीजी चित्त की स्थिरता के लिए तीन बातों में विश्वास की आवश्यकता मानते हैं—(१) भगवान् हैं, (२) वे सर्वगुणसम्पन्न हैं, (३) वे मूर्त्ति में हैं। पहली दो बातें तो ठीक हैं, किन्तु सर्वगुणसम्पन्न परमात्मा मात्र एक स्थान में रक्खी मूर्त्ति

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

में कैसे सीमित हो गये यह सिद्ध करना-कराना कठिन है, वस्तुतः परमात्मा के सर्वगुणसम्पन्न होने, सर्वशक्तिमान् होने तथा सर्वव्यापक होने का औचित्य भी तभी है जब उन्हें सर्वत्र परिपूर्ण, सर्वदेशी कहा जाए। सीमित स्थान घेरनेवाली मूर्त्ति में परमात्मा को सीमित करना चित्त की एकाग्रता का साधन नहीं हो सकता। इसी क्रम में वे आत्मविश्वास बनाये रखने के लिए भी मूर्त्तिपूजा को आवश्यक ठहराते हैं। यह कथन भी असिद्ध है, क्योंकि आत्मविश्वास बनाये रखने के लिए ईश्वरविश्वासी होना चाहिए। मनुष्यनिर्मित मूर्त्तिपूजा से आत्मविश्वास की स्थिति नहीं रहती है। आत्मविश्वास की जननी आस्तिकता है, जड़पूजा नहीं।

शास्त्रीजी के अनुसार मनुष्याकार भगवान् में चित्त को एकाग्र करने के लिए मूर्त्तिपूजा बाह्य करण है। उनका यह वाक्य वदतोव्याघात दोषयुक्त है। भगवान् न तो मनुष्याकार ही है और न ही किसी बाह्य करण द्वारा उन्हें प्राप्त किया जा सकता है। शास्त्रों में सर्वत्र परमात्मा को निराकार तथा किसी भी आकृति से रहित बताया गया है। परमात्मा को अन्तःकरण में ही देखा और जाना जाता है। उसके लिए उपनिषद् में स्पष्ट कहा गया है कि धीर पुरुष उस परमात्मा को आत्मा के भीतर ही देखते हैं। **तमात्मस्थं ये अनुपश्यन्ति धीराः।** वैदिक अध्यात्मशास्त्रों में जहाँ-जहाँ परमात्मा की प्राप्ति के करणों या साधनों की चर्चा हुई है वहाँ कहीं भी मूर्त्तिपूजा-जैसे बाह्य करण का उल्लेख नहीं हुआ। शास्त्रीजी ने अपने मत की पुष्टि में एक अन्य योगसूत्र "**यथाभिमतध्यानाद्वा**" को भी उद्धृत किया है, किन्तु इस पातञ्जल सूत्र से भी मूर्त्तिपूजा के औचित्य की सिद्धि नहीं होती, क्योंकि योगदर्शन के किसी भी भाष्यकार या टीकाकार ने इस सूत्र को मूर्त्तिपूजा का विधायक नहीं माना। सूत्र का सीधा-सा अर्थ तो यही है कि ध्यान करनेवाला साधक अपने मन को केन्द्रित करने के लिए उसे शरीर के किसी भी स्थान में निवेश कर सकता है।

शास्त्रीजी आध्यात्मिक विषयों को भी भौतिक मानदण्डों से नापते हैं, तभी तो वे लिखते हैं कि जिस प्रकार दृश्य-श्रव्य साधनों से किसी विषय की शिक्षा देना अधिक सुगम हो जाता है उसी प्रकार भगवान् की सुन्दर, आकर्षक और नयनमनोहारी मूर्त्ति के द्वारा मनुष्य का मन केन्द्रित हो जाता है। उनकी इस तुलना के बारे में क्या कहा जाए? संसारिक विषयों को दृश्य-श्रव्य (Audio Visual aids) साधनों से भले ही स्पष्ट किया जा सकता हो, किन्तु जो अदृश्य-अश्रव्य, अस्पृश्य, मन, वाणी से अगोचर तथा इन्द्रियातीत हो; उसकी सुन्दर, आकर्षक और नयनमनोहारी मूर्त्ति बनाना क्या शक्य भी है? अतः ऐसे सस्ते फार्मूलों से मूर्त्तिपूजा की सिद्धि करना सर्वथा अनुचित है। शास्त्रीजी परमात्मा का शृंगार करना चाहते

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हैं। कभी उसे पीताम्बरधारी बनाते हैं और कभी कोपीनधारी, किन्तु सर्वदिशाएँ ही जिसका वस्त्र है, वह व्यापक प्रभु न तो पीताम्बरधारी है और न ही कोपीनधारी। अखिल सृष्टि का शृंगार करनेवाले परम सुन्दर काम आप क्या खाक शृंगार करेंगे?

आठवले शास्त्रीजी की कुछ अन्य युक्तियों की परीक्षा करें। वे लिखिते हैं— "मन ही मूर्त्ति का आकार लेता है..... मन ही मूर्त्ति खड़ी करता है।" यह वाक्य अर्थहीन है। मूर्त्ति को कारीगर बनाता है, उसका मन से कोई सम्बन्ध नहीं है। पुनः उनका कथन है, "मन और बुद्धि को प्रभावी करने के लिए मूर्त्तिपूजा आवश्यक है। मूर्त्तिपूजा कोई बचपना नहीं, वह भगवान् की खुशामद नहीं है आदि"। मूर्त्तिपूजा से मन और बुद्धि का कोई विकास नहीं होता। जिन लोगों ने मूर्त्तिपूजा की उनका सारा जन्म इस बाह्याडम्बरपूर्ण व्यर्थ का आचरण करने में ही समाप्त हो गया। मन और बुद्धि को विकसित करने तथा अधिक प्रभावी बनाने के लिए सत्संग, स्वाध्याय, ईश्वरप्रणिधान, अभ्यास आदि के साधन शास्त्रों ने बताये हैं, मूर्त्तिपूजा के लिए यहाँ कोई स्थान नहीं है। शास्त्रीजी कहते हैं कि मूर्त्तिपूजा कोई बचपना नहीं है, किन्तु तनिक गम्भीरता से विचार करें तो मूर्त्तिपूजा से बढ़कर खिलवाड़ कहीं भी दिखाई नहीं देती। जिस प्रकार छोटी बालिकाएँ गुड़ियों का ब्याह रचाकर अपने मन को खुश करती हैं, उसी प्रकार यह मूर्त्तिपूजक भी अपनी खयाली दुनिया में रहकर परमात्मा को मूर्त्ति के बहाने कभी स्नान कराता है तो कभी उसे वस्त्र पहनाता है, कभी भोजन कराता है तो कभी शयन कराता है। जो सांसारिक इतिकर्त्तव्य संसारी प्राणियों के साथ जुड़े हैं उन्हें निर्लेप, निरंजन परमात्मा से जोड़ना क्या बालपना नहीं है। मूर्त्तिपूजा भगवान् की निकृष्टतम खुशामद ही नहीं उसकी सर्वशक्तिमत्ता का उपहास भी है, क्योंकि हम जगदाधार को आसन देने की हिमाक़त करते हैं, विश्वम्भर को भोजन कराते हैं और सर्वप्रकाशक के लिए दीपदान करते हैं।

स्थूल उपकरण ईश्वर-प्राप्ति के साधक नहीं

मूर्त्तिपूजा के उपकरण धूप, दीप, अगरबत्ती, चन्दन आदि एकत्र करने को शास्त्रीजी मन को स्थिर करने के साधन या तैयारी बताते हैं, किन्तु उपनिषदादि वैदिक अध्यात्म-ग्रन्थों में इन भौतिक उपकरणों को मन के स्थिरीकरण का उपाय कहीं नहीं बनाया गया। वहाँ तो यम-नियमादि के पालन, अभ्यास, वैराग्य, षट्सम्पत्ति आदि को ही मन की एकाग्रता का उपाय बताया गया है। ध्यान, योगदर्शन का एक पारिभाषिक शब्द है जो एक विशिष्ट साधन-क्रिया का वाचक है। उसकी विधि तथा स्वरूप योगसूत्रों में विस्तार से वर्णित है, किन्तु आठवले शास्त्रीजी किसी वृक्ष के तले खड़े मुरलीधर कृष्ण के चिन्तन को ही जब शास्त्रीय ध्यान कहते हैं तो हमें उनके इस अज्ञान पर हँसी आती है। वे भक्ति और उपासना को भिन्न अर्थ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

में प्रयुक्त करते हैं जबकि वस्तुतः ये दोनों शब्द एक ही भाव के द्योतक हैं। ईश्वर के प्रति परा-अनुरक्ति को भक्ति कहा गया है जबकि ईश्वर की सर्वव्यापकता को अनुभव कर आत्मिक दृष्टि से उसका सामीप्य लाभ करना उपासना है। वैदिक साहित्य में उपासना का ही प्रयोग होता रहा जबकि परवर्ती ग्रन्थों में भक्ति का भूरिशः प्रयोग हुआ है। निष्कर्षतः आठवलेजी द्वारा प्रयुक्त शास्त्रीय मूर्त्तिपूजा अपने-आपमें अर्थहीन है, क्योंकि वैदिक शास्त्रों से मूर्त्तिपूजा की सिद्धि सम्भव ही नहीं है।

ooo

सोचो-विचारो कुछ इधर-उधर की

वक्त की कदर करो। अगर आप वक्त को बरबाद करोगे तो वक्त आपको बरबाद कर देगा।

दुनिया की आधी लड़ाई जुबान की वजह से होती है। इसलिए बोलते समय गम्भीरता से और सोच-समझकर बात करनी चाहिए। इसलिए कहा गया है, 'अक्लमन्द सोचकर बोलता है और मूर्ख बिना सोचे-समझे। एक शब्द के ग़लत प्रयोग से बना-बनाया खेल बिगड़ जाता है। इसलिए बातचीत में सावधानी ब़रतनी चाहिए।

सुख और स्वास्थ्य की कीमत सिर्फ ५० पैसे और ५ मिनट रोज़

'अग्निहोत्र'.....सुख और स्वास्थ्य का अचूक उपाय। 'अग्निहोत्र' से सभी प्रकार का प्रदूषण समाप्त होता है। बच्चों की बुद्धि-क्षमता बढ़ती है, उनकी चिड़चिड़ाहट और गुस्सैल प्रवृत्ति पर अंकुश लगता है, वे प्रसन्न रहते हैं। खेतों में रासायनिक खादों व कीटनाशकों की ज़रूरत समाप्त होती है तथा पैदावार में पौष्टिकता बढ़ती है। मानव में प्रेम एवं सहनशीलता बढ़ती है। इससे खिलाड़ियों के फेफड़ों व मांसपेशियों का लचीलापन तथा दमशक्ति बढ़ती है।

'अग्निहोत्र' विधि इतनी सरल है कि अनपढ़ आदमी व छोटा बच्चा तक इसे सहज ही कर सकता है। इसका खर्च भी नाममात्र यानी भारतीय मुद्रा में महज़ पचास पैसे रोज़ाना है। इसे करने के लिए आपको न किसी संस्था को चन्दा देना है न किसी संगठन का सदस्य बनना है। अपना आध्यात्मिक मार्ग, खान-पान, पहनावा व आस्था, कुछ भी नहीं बदलना है। चौबीस घण्टों में सिर्फ पाँच मिनट आपको इस प्रक्रिया के लिए देने हैं।

पिरामिड आकार के तांबे या मिट्टी के बर्तन में ही 'अग्निहोत्र' किया जाता है। इसमें गाय के गोबर के कण्डों (उपलों) की अग्नि प्रज्वलित की जाती है। इस

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अग्नि में ठीक सूर्यास्त व सूर्योदय के समय पर दो वेदमन्त्रों से गाय के शुद्ध घी व चावलों की दो-दो आहुतियाँ दी जाती हैं। बस...इस प्रक्रिया के बाद निश्चिन्त हो जाइए, 'अग्निहोत्र' का लाभ आपको मिलना शुरू हो जाएगा।

क्रोध

क्रोध किसी कारण से ही पैदा होता है, पर कारण कितना ही बड़ा क्यों न हो, आप जितनी बार क्रोधित होते हैं उतनी ही बार अपनी हानि करते हैं। क्रोध शरीर में हल्के ज़हर का काम करता है।

जब कोई कहता है कि मेरा स्वभाव बुरा है, पर मैं उसे अपने वश में रखता हूँ तो वह अपने को गिरा लेता है। लोग उसे नापसन्द करने लगते हैं और उससे नाता तोड़ लेते हैं।

क्रोध हमारा शत्रु है। क्रोधरूपी जो आग आप अपने शत्रु के लिए अपने हृदय में जलाते हैं, वह प्रायः आपके शत्रु से अधिक स्वयं आपको जलाती है।

क्रोध से बचने के लिए जब क्रोध आने लगे तो एक से दस तक गिनती गिनिये और अगर क्रोध आ ही जाए तो एक से सौ तक गिनती गिनिये। क्रोध क्यों आ रहा है, इस सम्बन्ध में तर्क कीजिए और उसे धक्का देकर अपने मन में से निकाल दीजिए। जिस चोट की वजह से क्रोध आता है वह चोट उससे पैदा होनेवाले क्रोध की अपेक्षा कम हानि पहुँचाती है।

शत्रुता, बुरा बर्ताव, जलन, घबराहट, मार बैठना, घृणा, कठोरता, परेशानी, उद्वेग—ये क्रोध के पर्याय अथवा भाई-बन्द हैं। क्रोध निमन्त्रण पाकर अकेला नहीं, इन सबके साथ आता है।

वश में न आने पर क्रोध अनेक कठिनाइयाँ और परेशानियाँ पैदा कर देता है। वह दुःख और दरिद्रता को जन्म देता है। क्रोध आपमें घृणा का भाव पैदा कर देता है, जो कभी-कभी आदमी को नष्ट कर देता है।

एक व्यापारी ने, जिसपर क्रोध हावी हो रहा था और उसके व्यापार को नष्ट करने की सीमा तक पहुँच गया था, क्रोध पर विजय प्राप्त करने की अपनी कहानी यों लिखी है—"मैं अपनी इच्छा से अधिक ईश्वर के आदेशों से प्रीति करने लगा, उनका पालन करने लगा और अपने कार्यों को शान्तिपूर्वक और धैर्यपूर्वक करने लगा। अपने से अधिक दूसरों की सहायता करने लगा और बुरे विचार, आलोचना, घृणा, स्वार्थ, बदले की भावना, घमण्ड, कठोरता को मैंने दूर भगा दिया। मैं शान्त रहने लगा और सबके सामने झुककर चलने लगा। ईश्वर ने मेरी सहायता की। उसने मुझे क्रोध की भट्टी से निकालकर शान्ति के झरने के निकट ला बिठाया।"

आज इस आदमी को आदमियत का नमूना कहा जा सकता है। उसका शरीर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सशक्त और बलवान् है। उसकी इज़्ज़त बढ़ गई है और सबसे बड़ी बात यह हुई है कि पच्चीस वर्ष से चला आता उसका स्नायुदौर्बल्य रोग और हृदय की धड़कन, जिनकी वह दवा कराते-कराते थक गया था, अपने-आप चले गये हैं।

क्रोध से बचें

क्रोध से हृदय को उतना ही नुक्सान पहुँच सकता है जितना धूम्रपान या उच्च रक्तचाप से। ड्यूक विश्वविद्यालय के एक वैज्ञानिक का कहना है कि समय से पूर्व मौत के मुँह में जानेवालों में से कई की मृत्यु का कारण क्रोध होता है।

अमरीकी हृदय एसोसिएशन द्वारा प्रायोजित विज्ञान लेखकों की संगोष्ठी में डॉ० रैडफोर्ट बी० विलियम्स ने कहा कि हृदय रोगवाले व्यक्तियों के लिए क्रोध खतरनाक हो सकता है।

नयी प्रकाशित पुस्तकें

आचार्य गौरव : ब्र० नन्दकिशोर

आचार्य-शिष्य संबंधों की मार्मिक झाँकी प्रस्तुत की गई है। जहाँ शिष्यों को कर्त्तव्य-बोध कराया गया है, वहीं आचार्यों को राष्ट्र-निर्माण की दिशा भी दर्शायी गई है। **मूल्य : रु० ५.००**

महात्मा नारायण स्वामी : प्रा० राजेन्द्र जिज्ञासु

महात्मा नारायण स्वामी जी का जीवन बहुत घटनापूर्ण है। महात्मा जी के पास कोई ऊँची डिग्री नहीं थी, न ही वे धनवान् थे, परन्तु अपने चरित्र के कारण वे बहुत ऊँचे विचारक, सुधारक, महात्मा, योगी, लेखक व पूज्य नेता बन गए। इस स्वनिर्मित जीवन चरित से युवक-युवतियाँ बहुत कुछ सीख सकते हैं।

सामाजिक पद्धतियाँ : महाशय मदनजित् आर्य **मूल्य : रु० ५.५०**

सन्ध्या, हवन-मंत्र, यज्ञोपवीत धारण-मंत्र, प्रथम वस्त्र-परिधान, जन्म-दिवस पद्धति, विवाह दिवस, सगाई पद्धति, सेहरा बन्दी, शैंत, मिलनी, गार्हपत्याग्नि पद्धति, व्यापार-सूत्र, दुकान मुहूर्त, चुन्नी चढ़ाना, अन्त्येष्टि क्रिया आदि आवश्यक सामाजिक पद्धतियों के संग्रह। **मूल्य : रु० १२.००**

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेदोद्यान के चुने हुए फूल

आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति

वेद ही वास्तव में वह गंगोत्तरी है जहाँ से भारतीय संस्कृति की गंगा प्रवाहित होती है। भारतीय संस्कृति का शुद्ध रूप वेद में ही मिलता है। इस पुस्तक में वेद, ईश्वर, सृष्टि-प्रलय, उपासना, स्वास्थ्य और जीवन-शक्ति, ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, राष्ट्रनिर्माण आदि विभिन्न विषयों से सम्बन्ध रखनेवाले कुछ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण वेदमन्त्रों और सूक्तों का संग्रह किया गया है और उनकी विशद व्याख्या की गई है।

इस ग्रन्थ के अध्ययन से उदात्त वैदिक संस्कृति की अद्भुत झाँकी मिलेगी, भारतीयों के महान् ग्रन्थ वेद का एक संक्षिप्त चित्र उनके आगे उपस्थित होगा।

डिमाई साइज, सुन्दर छपाई, सजिल्द पुस्तक। **मूल्य : ५००**

वैदिक मधुवृष्टि

डॉ० रामनाथ वेदालंकार

वेद विविध बहुमूल्य विचार-रूप रत्नों के रत्नाकर हैं। मानव के लिए समस्त ज्ञान-विज्ञान, सदुपदेश एवं सत्प्रेरणाएँ इसमें निहित हैं। कहीं ईश-प्रस्तुति की दिव्य तरंग है, कहीं जीवन को ऊँचा उठानेवाली उदात्त भावनाएँ हैं, कहीं उपासना द्वारा भक्त का भगवान् से मिलन है। कहीं ओषधि-विज्ञान, चिकित्साशास्त्र की चर्चा है। कहीं कृषि, व्यापार की प्रेरणा है। कहीं पर्जन्य, वृष्टि, अरण्य और सरिताओं के गीत हैं। कहीं राष्ट्र-भक्ति और राष्ट्रोत्थान का सन्देश है। कहीं धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की मंजुल कथा है, कहीं यज्ञ की पावनता है।

इन निबन्धों में जो उदात्त भावनाएँ, जो आदर्श, जो प्रेरणाएँ, जो मर्यादाएँ, जो जीवनसूत्र प्रदर्शित हैं उनका आकलन पढ़कर ही किया जा सकता है।

डिमाई आकार, २५० पृष्ठों की सुमुद्रित पुस्तक। **मूल्य : ६००**

शीघ्र प्रकाश्य

आर्य सूक्ति-सुधा **लेखक : प्रा० राजेन्द्र जिज्ञासु**

आर्य सामाजिक साहित्य के इतिहास में प्रथम बार ही आर्यसमाज के इतने विद्वानों, महात्माओं व संन्यासियों की सूक्तियों को संग्रहीत करके छापा जा रहा है।

सभी मुख्य-मुख्य वैदिक सिद्धान्तों पर महर्षि दयानन्द व आर्य विचारकों के उद्धरण संग्रहीत करके प्राध्यापक राजेन्द्र जिज्ञासु ने गागर में सागर को बन्द कर दिया है। वैदिक धर्मियों के लिए यह पुस्तक एक ज्ञानकोश है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेद सूक्तियाँ

वेद प्रभु-प्रदत्त दिव्य ज्ञान है। वेद सार्वभौम एवं सार्वकालिक है। वेद देश, जाति, रंग की सीमाओं में आबद्ध नहीं है। वेद का ज्ञान आबाल-वृद्ध, नर-नारी, युवक-युवती सभी के लिए है।

स्वामी जगदीश्वरानन्द

द्वारा चारों वेदों का गहन अध्ययन करके इन सूक्तियों का मनोरम एवं उपदेशप्रद संकलन तैयार किया गया है।

इन सूक्तियों को पढ़िए, विचारिए, स्वयं कण्ठस्थ कीजिए, अपने बच्चों को कण्ठस्थ कराइए। लेखों और भाषणों में इनका प्रयोग कीजिए।

सामवेद सूक्तिसुधा, यजुर्वेद सूक्तिसुधा, अथर्ववेद सूक्तिसुधा, ऋग्वेद सूक्तिसुधा

पुस्तक-परिचय

आदिशंकराचार्य वेदान्ती नहीं थे

लेखक : स्वामी विद्यानन्द सरस्वती **मूल्य** : रु० ४०/-

आदिजगद्गुरू शंकराचार्य को नवीन वेदान्त का प्रवर्त्तक माना जाता है। वस्तुतः शंकराचार्य और अद्वैत वेदान्त पर्यायवाची बन गए हैं। परन्तु स्वामी विद्यानन्द जी की मान्यता है कि शंकर मूलतः वेदान्ती या अद्वैतवादी नहीं थे, उनके अनुसार उनकी मान्यता का संकेत सत्यार्थप्रकाश के ११वें समुल्लास के अन्तर्गत ऋषि दयानन्द के इन शब्दों में मिलता है—"अब विचारना चाहिए कि जो जीव-ब्रह्म की एकता शंकराचार्य का निजी मत था तो वह अच्छा नहीं। जो जैनियों के खण्डन के लिए उस मत को स्वीकार किया तो कुछ अच्छा है।" इस लेख से प्रतीत होता है कि ऋषि दयानन्द इस बात को सहन करने के लिए सर्वात्मना तैयार नहीं थे कि शंकर के नाम से जो सिद्धान्त आज हमारे सामने आ रहे हैं वे शंकर के निजी विचार रहे होंगे। जैन व बौद्ध मत के खण्डन की भावना से भी ऐसा मत स्वीकार करने की संभावना से इन्कार नहीं किया जा सकता।

स्वामी विद्यानन्द जी ने अपनी मान्यता की पुष्टि में शंकराचार्य के ग्रन्थों से अनेक प्रमाण उद्धृत किए हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हमारे महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

दयानन्द जीवन चरित	*लेखक : देवेन्द्र मुखोपाध्याय*	२५०-००
	अनु० : पं० घासीराम	
शतपथब्राह्मण (तीन खण्ड)	*अनु० पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय*	१८००-००
महात्मा हंसराज ग्रन्थावली (चार खण्ड)	*लेखक-सम्पादक प्रा० राजेन्द्र जिज्ञासु*	२४०-००
स्वामी श्रद्धानन्द ग्रन्थावली (ग्यारह खण्ड)	*ले० स० डॉ० भवानीलाल भारतीय*	६६०-००
	तथा प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु	
चयनिका	*क्षितीश वेदालंकार*	१२५-००
वैदिक मधुवृष्टि	*पं० रामनाथ वेदालंकार*	६०-००
वेदोद्यान के चुने हुए फूल	*आ० प्रियव्रत वेदवाचस्पति*	५०-००
वेद-मीमांसा	*स्वामी विद्यानन्द सरस्वती*	५०-००
सृष्टि विज्ञान और विकासवाद	*स्वामी विद्यानन्द सरस्वती*	४०-००
महाभारत सूक्तिसुधा	*पं० चन्द्रभानु सिद्धान्तभूषण*	४०-००
श्यामजी कृष्ण वर्मा	*डॉ० भवानीलाल भारतीय*	२४-००
आर्यसमाज विषयक साहित्य परिचय	*डॉ० भवानीलाल भारतीय*	२५-००
कल्याणमार्ग का पथिक (स्वामी श्रद्धानन्द की जीवनी)	*डॉ० भवानीलाल भारतीय*	६०-००
महात्मा हंसराज (जीवनी)	*प्रा० राजेन्द्र जिज्ञासु*	६०-००
धर्म का स्वरूप	*डॉ० प्रशान्त वेदालंकार*	५०-००
ऋषि बोध कथा	*स्वामी वेदानन्द सरस्वती*	१०-००
वैदिक धर्म	*स्वामी वेदानन्द सरस्वती*	२५-००
ईश्वर का स्वरूप	*सुरेशचन्द्र वेदालंकार*	१५-००
सहेलियों की वार्ता	*सुरेशचन्द्र वेदालंकार*	२०-००
सन्ध्या रहस्य	*पं० विश्वनाथ विद्यालंकार*	२५-००
आर्यसमाज का कायाकल्प कैसे हो	*प्रो० रामविचार एम० ए०*	४-००
वैदिक धर्म का संक्षिप्त परिचय	*ओम्प्रकाश त्यागी*	६-००
पूर्व और पश्चिम	*नित्यानन्द पटेल*	३५-००
सन्ध्या विनय	*नित्यानन्द पटेल*	६-००
भगवत् भजन जरूरी है	*नित्यानन्द पटेल*	१-५०
गीत सागर	*पं० नन्दलाल वानप्रस्थी*	२५-००
वेद भगवान बोले	*पं० वा० विष्णुदयाल (मारीशस)*	१५-००
हैदराबाद के आर्यों की साधना व संघर्ष	*पं० नरेन्द्र*	१५-००
आचार्य शंकर का काल	*आ० उदयवीर शास्त्री*	१०-००

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

याज्ञिक आचार-संहिता	पं० वीरसेन वेदश्रमी	४५-००
प्राणायाम विधि	महात्मा नारायण स्वामी	२-००
प्रेरक बोध कथाएँ	नरेन्द्र विद्यावाचस्पति	१५-००
वेद परिचायिका	डॉ० कृष्णवल्लभ पालीवाल	५-००
ओंकार गायत्री शतकम्	कवि कस्तूरचन्द	३-००
जीवात्मा	पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय	७५-००
सन्ध्या : क्या, क्यों, कैसे	पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय	१०-००
मुक्ति से पुनरावृत्ति	पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय	३-००
जीवन गीत	धर्मजित् जिज्ञासु	१२-००
पंचमहायज्ञविधि	महर्षि दयानन्द	३-००
व्यवहारभानु	महर्षि दयानन्द	४-००
आर्योद्देश्यरत्नमाला	महर्षि दयानन्द	१-५०
स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश	महर्षि दयानन्द	१-५०
ब्रह्मचर्यसन्देश	सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार	२५-००
श्रीमद्भगवद्गीता	पं० सत्यपाल विद्यालंकार	१५-००

WORKS OF SVAMI SATYAPRAKASH SARASVATI

Founders of Sciences in Ancient India (Two Vol.)	500-00
Coinage in Ancient India (Two Vol.)	600-00
Geometry in Ancient India	350-00
Brahmgupta and his Works	350-00
God and His Divine Love	5-00
The Critical and Cuultural Study of Satapath Brahman	700-00
Speeches, Writings & Addresses Vol.I : VINCITVERITAS	150-00
Speeches Writings & Addresses Vol.II : ARYA SAMAJ; A RENAISSANCE	150-00
Speeches, Writings & Addresses Vol. III : DAYANAND ; A PHILOSOPHER	150-00
Speeches, Writings & Addresses Vol. IV THREE LIFE HAZARDS	150-00

कर्म काण्ड की पुस्तकें

आर्य सत्संग गुटका	३-००	संध्या-हवन-दर्पण (उर्दू)	८-००
पंचयज्ञ प्रकाशिका	८-००	सत्संग मंजरी	६-००
वैदिक संध्या	०-७५	Vedic Prayer	3-00

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नयी प्रकाशित पुस्तकें

विदुर नीति : जगदीश्वरानन्द सरस्वती। अब तक प्रकाशित संस्करणों में सर्वश्रेष्ठ; मूल संस्कृत पाठ का शुद्धतम रूप, विशद भावार्थ, जहाँ आवश्यक वहाँ 'विशेष' वक्तव्य, अनेक स्थानों पर पाठ-भेद दर्शाये गए हैं तथा अंग्रेजी-अनुवाद भी किया गया है। मूल्य : ४०-००

त्यागमयी देवियाँ : महात्मा आनन्द स्वामी। त्याग और सेवा की मूर्तियाँ : पार्वती, सीता, पद्मिनी की जीवनियों को जो भी पढ़ेगा, मुग्ध होगा। स्वामीजी के कहने का ढंग अनोखा है और वह सीधा आत्मा को छू लेता है। मूल्य : ८-००

सन्ध्या रहस्य : एं० विश्वनाथ विद्यालंकार। सत्यार्थप्रकाश, संस्कारविधि, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका आदि ग्रन्थों में भिन्न-भिन्न स्थलों में सन्ध्या-मन्त्रों की जो पद्धतियाँ बिखरी पड़ी हैं उन सबका संग्रह इस पुस्तक में किया गया है। सन्ध्या के मन्त्रों की व्याख्या से गूढ़ भावों को स्पष्ट किया गया है। मूल्य : २५-००

प्रेरक बोध कथाएँ : नरेन्द्र विद्यावाचस्पति। इस संकलन की कथाएँ जितनी वामन (लघु) हैं, उनका उद्देश्य और प्रभाव उतना ही विराट् एवं व्यापक है। प्रत्येक कथा अपनी अमिट छाप छोड़ती है और पाठक को वैसा ही कुछ करने के लिए यत्नशील बनाती है। मूल्य : १५-००

घर का वैद्य—धूप-पानी : सुनील शर्मा। सृष्टि के दो प्रमुख आधार हैं 'धूप' और 'पानी'। सूर्य-किरणों में जो सात रंग झलकते हैं, उन रंगों की भाषा और गुण जानकर यदि उन्हें जल में समो लें तो असंख्य रोगों से मुक्ति मिल सकती है। आप इसे पढ़कर वैद्यराज बन सकते हैं और बहुतों का भला कर सकते हैं। मूल्य : १५-००

हमारे बालनायक : सुनील शर्मा। उत्सर्ग और कर्मठता को प्रेरित करनेवाले किशोर बालनायकों की ये ऐसी जीवनियाँ हैं जो अपने-अपने समय में इतिहास-पुरुष बन गए। इसमें सम्मिलित हैं : आरुणि, शतमन्यु, एकलव्य, श्रवण, अभिमन्यु, हकीकतराय व हरिसिंह नलवा की जीवनियाँ। मूल्य : ८-००

देश के दुलारे : सुनील शर्मा। देश की आज़ादी के लिए अपने जीवन भेंट चढ़ानेवालों के संघर्ष पर ध्यान दें तो रोंगटे खड़े हो जाते हैं। यदि रोमांचक साहित्य ही बच्चों को प्रिय है तो उन्हें प्रह्लाद, कृष्ण-सुदामा और चन्द्रहास जैसे धीर-वीर नायकों और बादल, करतार सिंह, रामप्रसाद बिस्मिल और भगतसिंह जैसे क्रान्तिकारियों की जीवनियाँ पढ़ने को दें। मूल्य : ८-००

हमारे कर्णधार : सुनील शर्मा। भारतीय राष्ट्र-निर्माताओं के पुण्य जीवन की मार्मिक झाँकियों से पूर्ण यह ऐसा संकलन है जिसे आप चाव से अपने बच्चों को पढ़ने के लिए देना चाहेंगे। इसमें सम्मिलित हैं : महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी, महर्षि दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, लाला लाजपतराय, चन्द्रशेखर आज़ाद, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस। मूल्य : ८-००

आदर्श महिलाएँ : नीरू शर्मा। भारतीय नारियों के तप और त्याग, सतीत्व और नारीत्व, कर्त्तव्य और बलिदान की ये अनूठी और आदर्श जीवनियाँ सभी आयु और प्रत्येक वर्ग के पाठक को मुग्ध कर देंगी। इसमें सम्मिलित हैं : शैव्या (तारामती), विदुला, पद्मा, अहिल्याबाई, दुर्गा, राजबाला, पन्ना, रत्नावती, लक्ष्मीबाई। मूल्य : ८-००

कथा पच्चीसी : स्वामी दर्शनानन्द। स्वामीजी वेदों और दर्शन-शास्त्रों के मर्मज्ञ एवं प्रकाण्ड विद्वान् थे। ये हृदयग्राही कथाएँ उनकी लेखनी का ऐसा चमत्कार हैं जो प्रत्येक आयु के पाठक को अच्छे और ऊँचे संस्कार प्रदान करती हैं। मूल्य : ८-००

महर्षि दयानन्द चरित : देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय। अनुवादक : पं० घासीराम। लेखक ने १५ वर्ष तक सम्पूर्ण भारत में भ्रमण करके जहाँ-जहाँ ऋषि गये थे, वहाँ जाकर, जिन-जिन लोगों से मुनि मिले थे, उन-उनसे मिलकर उनके जीवन की सामग्री एवं घटनाओं का संकलन किया था। मूल्य : २५०-००

वीतराग सेनानी स्वामी स्वतन्त्रानन्द : प्रा० राजेन्द्र जिज्ञासु। आर्यसमाज के निर्माता लौहपुरुष स्वामी स्वतन्त्रानन्द की यह बालोपयोगी, प्रामाणिक व प्रेरणाप्रद पावन जीवनी युवक-युवतियों का मार्गदर्शन करेगी। मूल्य : ४-५०

देवतास्वरूप भाई परमानन्द : प्रा० राजेन्द्र जिज्ञासु। भाईजी उच्च कोटि के विचारक, सुधारक, तपस्वी, बलिदानी, शिक्षाशास्त्री व लेखक थे। उनकी यह बालोपयोगी जीवनी बच्चों को नई दिशा दिखाएगी। मूल्य : ५-५०

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बहुत दिनों बाद प्रकाशित पुस्तकें

चाणक्यनीतिदर्पण : स्वामी जगदीश्वरानन्द। भारतीय और पाश्चात्य सभी विद्वान् चाणक्य की कूटनीति और राजनीति का लोहा मानते हैं। चाणक्य का यह ग्रन्थ केवल राजनीति का विवेचन ही प्रस्तुत नहीं करता अपितु यह धर्मनीति में भी अपना सानी नहीं रखता। प्रत्येक श्लोक का शब्दार्थ एवं भावार्थ दिया गया है। प्रक्षिप्त श्लोकों का निर्देश कर दिया गया है। मूल्य : ६०-००

मर्यादा पुरुषोत्तम राम : स्वामी जगदीश्वरानन्द। पुस्तक में मर्यादा पुरुषोत्तम राम के जीवन की दिव्य एवं पावन झाँकी है। श्रीराम के सम्बन्ध में उठनेवाली सभी शंकाओं का समाधान है। यदि आप अपने पुत्रों तथा पुत्रियों को आदर्श एवं मर्यादापालक बनाना चाहते हैं तो यह पुस्तक उनके हाथ में दे दीजिए। मूल्य : १२-००

चतुर्वेदशतकम् : स्वामी जगदीश्वरानन्द। प्रत्येक वेद से अलग-अलग चुने हुए सौ-सौ मन्त्रों का संकलन किया गया है, और साथ ही उनका सरल पदार्थ व भावार्थ दिया गया है। वेद-परिचय प्राप्त करनेवालों के लिए ये शतक उपादेय हैं। मूल्य : ५०-००

ब्रह्मचर्य सन्देश : सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार। ब्रह्मचर्य क्या है और इसके धारण करने के लाभ संस्कृत के इस श्लोकांश से स्पष्ट हो जाते हैं—'ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत', अर्थात् ब्रह्मचर्य के तप से ज्ञानी लोग मृत्यु को भी परास्त कर देते हैं। विद्वान् लेखक ने इस विषय पर बड़ी रोचक और उपयोगी व्याख्या की है। मूल्य : २५-००

श्रीमद्भगवद्गीता : अनु० सत्यपाल वेदालंकार, सम्पा० सन्तोष कुमार वेदालंकार। गीता के समस्त श्लोकों का हिन्दी अनुवाद। अनुवादक की विशेष भूमिका। गुत्थियों को सुलझानेवाला एक विशेष संस्करण। अकारादि क्रम से श्लोकों की सूची सहित। मूल्य : १५-००

गीता सागर : पं० नन्दलाल वानप्रस्थी। आर्यसमाज के अनेक कवियों व भजनोपदेशकों की प्रतिनिधि रचनाओं का संकलन। भजनों व गीतों में ईश्वर-स्तुति, प्रार्थना-उपासना, अछूतोद्धार, देशभक्ति, समाज-सुधार, स्त्री-शिक्षा, पाखण्ड-खण्डन आदि का समावेश। मूल्य : २५-००

वेद भगवान् बोले : पं० विष्णुदयाल (मॉरीशस)। वेद वैदिक संस्कृति का मूलाधार हैं। संसार में जितना ज्ञान-विज्ञान, विधाएँ और कलाएँ हैं, उन सबका आदि-स्रोत वेद हैं। मॉरीशसवासी पं० विष्णुदयाल के वेदों पर लिखे गये महत्त्वपूर्ण लेखों का संग्रह। मूल्य : १५-००

दयानन्द चित्रावली : पं० रामगोपाल विद्यालंकार। महर्षि दयानन्द की जीवन-घटनाओं से सम्बन्धित बड़े साइज के ३० से भी अधिक रंग-बिरंगे चित्रों से सुसज्जित। ऋषि की प्रभावशाली उपदेशप्रद घटनाओं का वर्णन भी बड़े अक्षरों में किया गया है जिससे ऋषि के जीवन-चरित को सुगमता से हृदयङ्गम किया जा सकता है। पाठशाला में विद्यार्थियों को पुरस्कार देने योग्य। कई रंगों का अनोखा आवरण। मूल्य : २५-००

याज्ञिक आचार संहिता : पं० वीरसेन वेदश्रमी। लेखक ने वर्षों अनुसन्धान कर यज्ञ के सम्बन्ध में उठनेवाले प्रश्नों का समाधान इस ग्रन्थ में प्रस्तुत किया है। मूल्य : ४५-००

विवाह और विवाहित जीवन : पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय। विवाह तथा विवाहित जीवन से सम्बन्धित प्रश्नों पर इस ग्रन्थ में बड़ा रोचक विश्लेषण है। यह पुस्तक नई-नवेली दुल्हन से भी सुन्दर और रोमांचक है। मूल्य : १८-००

शीघ्र प्रकाश्य

आदि शंकराचार्य वेदान्ती नहीं थे : (स्वामी विद्यानन्द सरस्वती) आदि शंकराचार्य मूलतः अद्वैतवादी नहीं थे—ऋषि दयानन्द द्वारा सत्यार्थप्रकाश में संकेतित इस विचार की पुष्टि में एक छोटा-सा ग्रन्थ।

वैदिक ज्ञानधारा : (सं० प्रा० राजेन्द्र जिज्ञासु) आर्यसमाज की पहली व दूसरी पीढ़ी के संन्यासी महात्मा, नेता व विद्वान् सभी उच्च कोटि के गवेषक, लेखक व वक्ता थे, उन्हीं पुराने आर्य लेखकों, विचारकों के भिन्न-भिन्न विषयों पर लिखे गये महत्त्वपूर्ण लेखों का संग्रह।

दीप्ति : (स्वामी विद्यानन्द सरस्वती) विवादास्पद विषयों का विवेचन।

Bodh Kathayen : Mahatma Anand Swami : Translation of Swamijis book 'बोध-कथाएँ'

How to Lead Life : Mahatma Anand Swami : Translation of Swamiji's book 'दुनिया में रहना किस तरह'

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष-प्रदायिनी

महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती की

सरल-सुबोध आध्यात्मिक पुस्तकें

आनन्द गायत्री कथा	१२-००
एक ही रास्ता	१२-००
शंकर और दयानन्द	८-००
मानव जीवन-गाथा	१२-००
सत्यनारायण व्रत कथा	५-००
भक्त और भगवान	१२-००
उपनिषदों का सन्देश	१६-००
घोर घने जंगल में	२०-००
मानव और मानवता	३०-००
प्रभु मिलन की राह	२०-००
यह धन किसका है ?	२०-००
बोध-कथाएँ	१६-००
दो रास्ते	१५-००
दुनिया में रहना किस तरह ?	१५-००
तत्वज्ञान	२०-००
प्रभु-दर्शन	१५-००
प्रभु-भक्ति	१२-००
महामन्त्र	१२-००
सुखी गृहस्थ	६-००
त्यागमयी देवियाँ	८-००

अंग्रेजी पुस्तकें

Anand Gayatry Discourses	30-00
The Only Way	30-00
Bodh Kathayen	In Press

जीवनी

महात्मा आनन्द स्वामी (उर्दू)	१०-००
महात्मा आनन्द स्वामी (हिन्दी)	२५-००

स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती कृत विद्वत्तापूर्ण पुस्तकें

महाभारतम् (तीन खण्ड)	६००-००
वाल्मीकि रामायण	१५०-००
षड्दर्शनम्	प्रेस में
चाणक्यनीति दर्पण (सजिल्द)	१००-००
" " (अजिल्द)	६०-००
विदुरनीतिः (सजिल्द)	८०-००
" " (अजिल्द)	४०-००
ब्रह्मचर्य गौरव	९-००
विद्यार्थियों की दिनचर्या	९-००
दिव्य दयानन्द	८-००
कुछ करो कुछ बनो	१२-००
मर्यादा पुरुषोत्तम राम	१२-००
आदर्श परिवार	१५-००
वैदिक उदात्त भावनाएँ	१५-००
वेद सौरभ	१२-००
दयानन्द सूक्ति और सुभाषित	२५-००
वैदिक विवाह पद्धति	८-००
ऋग्वेद सूक्तिसुधा	२५-००
यजुर्वेद सूक्ति सुधा	१२-००
अथर्ववेद सूक्ति सुधा	१५-००
सामदेव सूक्ति सुधा	१२-००
ऋग्वेद शतकम्	८-००
यजुर्वेद शतकम्	८-००
सामदेव शतकम्	८-००
अथर्ववेद शतकम्	८-००
भक्ति संगीत शतकम्	६-००
चमत्कारी ओषधियाँ	१२-००
घरेलू ओषधियाँ	१२-००
चतुर्वेद शतकम् (सजिल्द)	५०-००
स्वर्ण पथ	८-००

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विद्याभास्कर, वेदरत्न, न्याय-वैशेषिक, सांख्य-योगतीर्थ,
वेदान्ताचार्य, शास्त्रशेवधि

आचार्य उदयवीर शास्त्री ग्रन्थावली

(पृष्ठ संख्या ७००० के लगभग डिमाई आकार में)

ग्रन्थावली में सम्मिलित ग्यारह ग्रन्थ

१.	न्यायदर्शन भाष्य	१५०-००
२.	वैशेषिकदर्शन भाष्य	१२५-००
३.	सांख्यदर्शन भाष्य	१००-००
४.	योगदर्शन भाष्य	१२५-००
५.	वेदान्तदर्शन भाष्य (ब्रह्मसूत्र)	१८०-००
६.	मीमांसादर्शन का विद्योदय भाष्य	३५०-००
७.	सांख्यदर्शन का इतिहास	२५०-००
८.	सांख्य सिद्धान्त	२००-००
९.	वेदान्तदर्शन का इतिहास	२००-००
१०.	प्राचीन सांख्य सन्दर्भ	१००-००
११.	वीर तरंगिणी (लेखों का संग्रह)	२५०-००

सम्पूर्ण ग्रन्थावली के
ग्यारह खण्डों का मूल्य २०३०-००

यह अमूल्य ग्रन्थावली बहुत बढ़िया कागज पर, सुन्दर छपाई, पक्की कपड़े की जिल्द में नयनाभिराम भी है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बाल साहित्य

आर्य नेताओं की बालोपयोगी जीवनियाँ

महर्षि दयानन्द	*त्रिलोकचन्द विशारद*	४-५०
गुरु विरजानन्द	*त्रिलोकचन्द विशारद*	४-५०
स्वामी श्रद्धानन्द	*त्रिलोकचन्द विशारद*	३-००
धर्मवीर पं० लेखराम	*त्रिलोकचन्द विशारद*	३-००
मुनिवर पं० गुरुदत्त	*त्रिलोकचन्द विशारद*	३-००
स्वामी दर्शनानन्द	*सत्यभूषण वेदालंकार*	३-००
महात्मा हंसराज	*प्रा० राजेन्द्र जिज्ञासु*	४-५०
वीतराग सेनानी स्वामी स्वतन्त्रानन्द	*प्रा० राजेन्द्र जिज्ञासु*	४-५०
महात्मा नारायण स्वामी	*प्रा० राजेन्द्र जिज्ञासु*	४-५०
नैतिक शिक्षा—प्रथम	*सत्यभूषण वेदालंकार एम० ए०*	२००
नैतिक शिक्षा—द्वितीय	*सत्यभूषण वेदालंकार एम० ए०*	२५०
नैतिक शिक्षा—तृतीय	*सत्यभूषण वेदालंकार एम० ए०*	३.५०
नैतिक शिक्षा—चतुर्थ	*सत्यभूषण वेदालंकार एम० ए०*	४-५०
नैतिक शिक्षा—पंचम	*सत्यभूषण वेदालंकार एम० ए०*	४.५०
नैतिक शिक्षा—षष्ठ	*सत्यभूषण वेदालंकार एम० ए०*	५.५०
नैतिक शिक्षा—सप्तम	*सत्यभूषण वेदालंकार एम० ए०*	५.५०
नैतिक शिक्षा—अष्टम	*सत्यभूषण वेदालंकार एम० ए०*	५.५०
नैतिक शिक्षा—नवम	*सत्यभूषण वेदालंकार एम० ए०*	८००
नैतिक शिक्षा—दशम	*सत्यभूषण वेदालंकार एम० ए०*	८००
ब्रह्मचर्य गौरव	*स्वामी जगदीश्वरानन्द*	९००
विद्यार्थियों की दिनचर्या	*स्वामी जगदीश्वरानन्द*	९००
स्वर्ण पथ	*स्वामी जगीदश्वरानन्द*	८००
मातृ गौरव	*नन्दकिशोर*	५००
त्यागमयी देवियाँ	*महात्मा आनन्द स्वामी*	८००
हमारे बालनायक	*सुनील शर्मा*	८००
देश के दुलारे	*सुनील शर्मा*	८००
हमारे कर्णधार	*सुनील शर्मा*	८००
आदर्श महिलाएँ	*नीरू शर्मा*	८००
कथा पच्चीसी	*स्वामी दर्शनानन्द*	८००
बाल शिक्षा	*स्वामी दर्शनानन्द*	२.५०
वैदिक शिष्टाचार	*हरिश्चन्द्र विद्यालंकार*	३.५०
दयानन्द चित्रावली	*पं० रामगोपाल विद्यालंकार*	२५००

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

घर का वैद्य

जब प्रकृति की अनमोल दवाइयाँ आपको आसानी से उपलब्ध हों तो गोली, पुड़िया, कैप्सूल या इन्जेक्शन की क्या जरूरत है ?

घर का वैद्य—प्याज	६-००	घर का वैद्य—हल्दी	६-००
घर का वैद्य—लहसुन	६-००	घर का वैद्य—बरगद	६-००
घर का वैद्य—गन्ना	६-००	घर का वैद्य—दूध-घी	६-००
घर का वैद्य—नीम	६-००	घर का वैद्य—दही-मट्ठा	६-००
घर का वैद्य—सिरस	६-००	घर का वैद्य—हींग	६-००
घर का वैद्य—तुलसी	६-००	घर का वैद्य—नमक	६-००
घर का वैद्य—आँवला	६-००	घर का वैद्य—बेल	६-००
घर का वैद्य—नींबू	६-००	घर का वैद्य—शहद	६-००
घर का वैद्य—पीपल	६-००	घर का वैद्य—फिटकरी	६-००
घर का वैद्य—आक	६-००	घर का वैद्य—साग-भाजी	६-००
घर का वैद्य—गाजर	६-००	घर का वैद्य—अनाज	६-००
घर का वैद्य—मूली	६-००	घर का वैद्य—फल-फूल	६-००
घर का वैद्य—अदरक	६-००	घर का वैद्य—धूप-पानी	१५-००

सभी पच्चीस पुस्तकें पाँच आकर्षक जिल्दों में भी उपलब्ध

घर का वैद्य-१ (प्याज, लहसुन, गन्ना, नीम, सिरस)	४५-००
घर का वैद्य-२ (तुलसी, आँवला, नींबू, पीपल, आक)	४५-००
घर का वैद्य-३ (गाजर, मूली, अदरक, हल्दी, बरगद)	४५-००
घर का वैद्य-४ (दूध-घी, दही-मट्ठा, हींग, नमक, बेल)	४५-००
घर का वैद्य-५ (शहद, अनाज, फिटकरी, साग-भाजी, फल-फूल)	४५-००
घर का वैद्य—धूप-पानी (सजिल्द)	४०-००

चित्र

स्वामी दयानन्द (कुर्सी)	१८" × २२" एक रंग	३-००
स्वामी दयानन्द (आसन)	१८" × २२" एक रंग	३-००
स्वामी श्रद्धानन्द	१८" × २२" एक रंग	३-००
गुरु विरजानन्द	१८" × २२" एक रंग	३-००
पण्डित लेखराम	१८" × २२" एक रंग	३-००
स्वामी दर्शनानन्द	१८" × २२" एक रंग	३-००
पं० गुरुदत्त विद्यार्थी	१८" × २२" एक रंग	३-००
महात्मा हंसराज	१८" × २२" एक रंग	३-००

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वैदिक विचारधारा का वैज्ञानिक आधार

लेखक : प्रो० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार
(भूतपूर्व उपकुलपति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय)

आज का मानव भौतिकवादी पन्थ पर चल पड़ा है। जीवन का लक्ष्य खाने-पीने, मौज-बहार के सिवाय और कुछ नहीं माना जाता, इसका अवश्यम्भावी परिणाम चोरी-डाका, अनाचार-दुराचार ही हो सकता है। वैदिक विचारधारा का कहना है कि इस भौतिक जगत् को ही आदि और अन्त मानकर नहीं जिया जा सकता।

इस ग्रन्थ में वैदिक विचारधारा को विज्ञान की कसौटी पर कसकर उसे परखने का प्रयत्न किया गया है, ताकि हमारी नई पीढ़ी जिन मान्यताओं को अवैज्ञानिक कहकर छोड़ती जा रही है उन पर इस दृष्टि से सोचने का यत्न करे कि उनमें अवैज्ञानिकता कहां है ? ग्रन्थ में उन प्रश्नों पर वैज्ञानिक-भावना से विचार किया गया है जो जीवन में किसी न किसी समय हर किसी को उलझन में डाल देते हैं।

मूल्य : १५०.०० रुपये

आर्यसमाज के बीस बलिदानी

लेखक : डॉ० भवानीलाल भारतीय

बालक की महानता हमेशा बालक बने रहने में नहीं है; महानता इस बात में है कि वह बड़ा बने, महान् बने, इतना विराट् बने कि संसार उसे मरने के बाद भी याद करे। मनुष्य की असली पहचान उसकी मनुष्यता है। जब वह पूरे समाज, समूचे प्रदेश और पूरे राष्ट्र की सीमाओं से ऊपर उठकर सारे ब्रह्माण्ड का हो जाता है, तब वह 'आर्य' बन जाता है।

'आर्य' किसी जाति, वर्ग, मजहब या सम्प्रदाय का नाम नहीं है। 'आर्य' वही है जो समूची मानवता की पीड़ा को अपनी पीड़ा समझे। ऐसे ही बीस आर्य महापुरुषों के विराट् रूप इस पुस्तक में दर्शाए गए हैं। इसे पढ़कर बच्चों, नव-साक्षरों और प्रौढ़ों को सत्प्रेरणा मिलेगी।

डाक्टर भवानीलाल भारतीय ने इसे भाषा और शैली की दृष्टि से किशोरोपयोगी बनाकर प्रशंसनीय काम किया है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

मूल्य : १५.०० रुपये

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हमारा १९९५ का बृहद् विशेषांक :

दर्शनानन्द ग्रन्थ संग्रह

यह ग्रन्थ 'दयानन्द चरित' आकार में २०×३०/८ लगभग ६०० पृष्ठ का सजिल्द होगा।

स्वामी दर्शनानन्द जी ट्रैक्ट लिखने की मशीन थे। जीवन में बहुत ट्रैक्ट लिखे। सब उर्दू में लिखे। अनेक विद्वानों ने उनका हिन्दी अनुवाद किया।

इस ग्रन्थ-संग्रह में हम दर्शनानन्द जी के ६४ ट्रैक्ट दे रहे हैं। ईश्वर विचार, ईश्वरप्राप्ति, वेद, मुक्ति, जीव का अनादित्व, गुरुकुल, भोला यात्री, द्वैतवाद आदि अनेक विषयों पर अत्यन्त खोजपूर्ण सामग्री इस ग्रन्थ में पाठकों को मिलेगी।

इस ग्रन्थ का सम्पादन करेंगे आर्यजगत् के प्रसिद्ध विद्वान् **स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती।**

जिन मन्त्रों, सूत्रों और श्लोकों के पते नहीं हैं, उन्हें खोजकर देने का स्वामी जी का भरसक प्रयत्न रहेगा। आधुनिक साज-सज्जा से सुभूषित कलापूर्ण मुद्रण होगा। बढ़िया कागज होगा। इस ग्रन्थरत्न का मूल्य २५० रुपये होगा। परन्तु वेद-प्रकाश के सदस्यों को केवल १५० में मिलेगा। इसमें एक वर्ष तक वेदप्रकाश भी निःशुल्क मिलता रहेगा। विशेषाङ्क को भेजने का खर्च भी हम स्वयं वहन करेंगे।

ऐसा भव्य और दिव्य ग्रन्थ पहली बार छप रहा है। हम स्वामी दर्शनानन्द जी का सच्चा श्राद्ध कर रहे हैं। आर्य साहित्य में यह एक ठोस वृद्धि होगी।

हमारा 'वेदप्रकाश' के सदस्यों और पाठकों से निवेदन है कि वे स्वयं ग्राहक बनें और अन्यों को बनायें।

शीघ्रता करें। ग्रन्थ सीमित संख्या में ही छपेगा।

यदि पाठकों ने उत्साह दिखाया तो इसका दूसरा भाग भी देने का प्रयत्न करेंगे। यह मार्च ९५ में पाठकों को मिलेगा।

'वेद की मूल संहिताओं' के प्रकाशन योजना के लिए कई आर्यसमाजों ने हमारा उत्साह बढ़ाया है और इस योजना के लिए भी आर्यसमाज आगे आयें तो बृहद् विशेषांक प्रकाशित करने की योजना को बल मिलेगा तथा भविष्य में और अधिक ठोस योजनाओं पर कार्य करने की शक्ति मिलेगी।

प्रकाशक-मुद्रक अजयकुमार ने सम्पादित कर प्रज्ञा प्रिंटर्स, दिल्ली-३२ में मुद्रित करा वेद प्रकाश कार्यालय, ४४०८ नयी सड़क, दिल्ली से प्रसारित किया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi